# चम्बा जिले का इतिहास

(पूर्व रियासत चम्बा, हि0 प्र0)

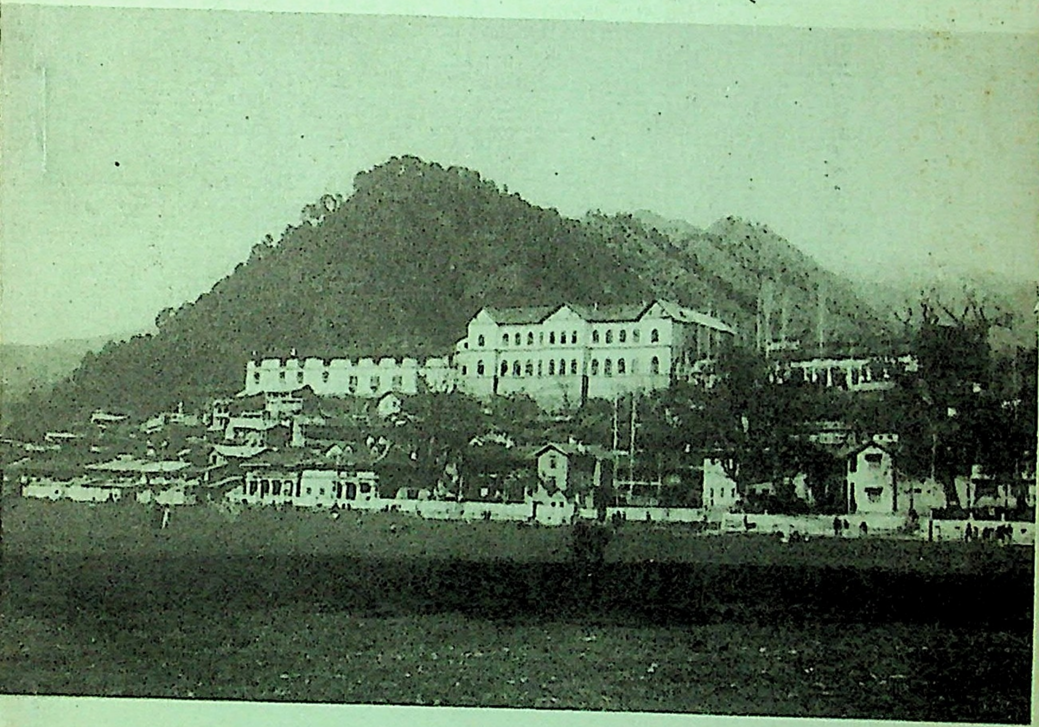

— मंगत राम वर्मा

शारदा पुस्तकालय
(संभावना [illegible])
क्रमांक 352

# HIMACHAL PRADESH (DISTT. CHAMBA

SCALE:- ONE INCH TO. SIXTEEN MILES.

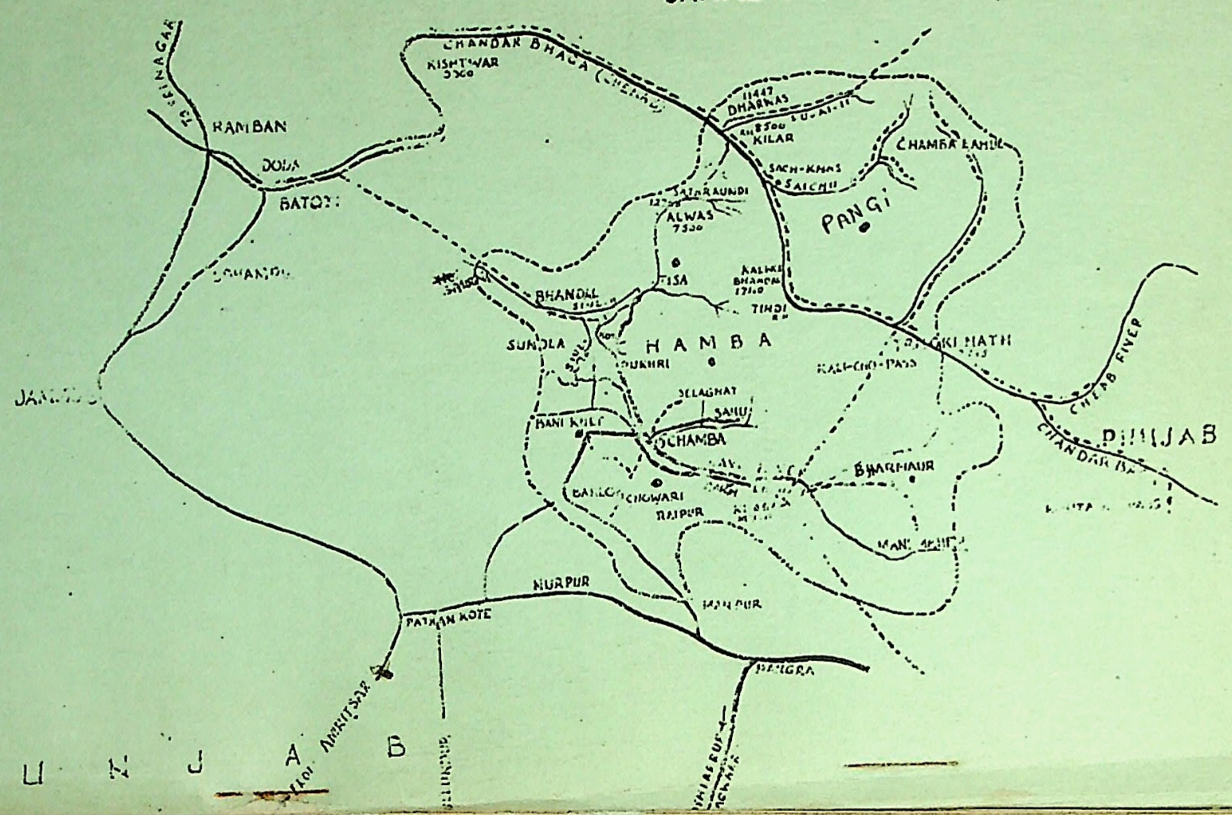
JAMMU & KASHMIR
TO SRINAGAR
RAMBAN
DODA
BATOT
CHANDRA BHAGA (CHENAB)
KISHTWAR
5300
11447
DHARNAS
KILAR
8500
SACH-KHAS
SAICHU
CHAMBA LAHUL
PANGI
SATARAUNDI
12
ALWAS
7500
TISA
KALHKI
BHANDH
17100
TINDI
BHANDAL
SUNDLA
CHAMBA
PUKHRI
SELAGHAT
SAHU
BANI KHET
CHAMBA
BALLOO
CHOWARI
RAIPUR
BHARMAUR
KALI-CHO-PASS
TRILOKINATH
CHENAB RIVER
CHANDAR BHAGA
PUNJAB
JAMMU
NURPUR
PATHANKOTE
AMRITSAR
KANGRA
P U N J A B

इन्द्र कुमार

# चम्बा जिले का इतिहास

## (पूर्व रियासत चम्बा, हि0 प्र0)

मंगत राम वर्मा

शाखा पुस्तकालय
(सं[illegible] केंद्र)
क्रमांक 352

**भारतीय इतिहास संकलन योजना समिति**
**हिमाचल प्रदेश द्वारा मान्य प्रकाशन**

लेखक : मंगत राम वर्मा

प्रथम संस्करण : नवम्बर 1995

प्रकाशक : मंगल राम वर्मा (विधा कुटीर, चम्बा (हि. प्र.)

मूल्य : पच्चीस रुपये

मुद्रक : ग्राफिक वर्ल्ड, 1686 दरियागंज, नई दिल्ली - 2

# प्रस्तावना

इतिहास का राष्ट्र के निर्माण में कितना महत्व है, इसे कौन नहीं जानता। हर व्यक्ति के मन में अपने पूर्वजों, अपने भूतकाल, अपने देश-प्रदेश के बारे में जानने की एक स्वाभाविक इच्छा रहती है। बीते समय की घटनाओं को जानकर उसे वर्तमान को समझने में सहायता मिलती है। पंजाब की पहाड़ी रियासतों में चम्बा रियास्त जो आज हिमाचल प्रदेश पश्चिमोत्तर सीमा पर एक ज़िला है, का बड़ा रोचक इतिहास रहा है। देश के अन्य भागों की भान्ति इस भूभाग का भी पूर्ण रूप से लिखित इतिहास उपलब्ध नहीं किन्तु एक सुखद पक्ष यह है कि राजाओं में वंशावली लिखने की और उसे सुरक्षित रखने की परम्परा रही है। यह वंशावली कड़ी के रूप में छठी शताब्दी से जब ब्रह्मपुर में सूर्यवंशी रघुकुल राज्य की स्थापना हुई, वर्तमान काल तक विद्यमान है। चम्बा के इतिहास संकलन में ताम्रपट्टों, शिलालेखों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है चूंकि कश्मीर राज्य के सम्बन्ध चम्बा राज्य के साथ, ऐसे लगता है, इस की स्थापना काल से पूर्व से ही चले आ रहे हैं, इसलिए कल्हण की राजतरंगिणी में भी चम्बा के इतिहास पर प्रचुर प्रकाश डाला है। विशेषता यह है कि वंशावली, ताम्रपत्रों और शिलालेखों से उपलब्ध इतिहास सामग्री के तथ्यों की राजतरंगिणी में वर्णित घटनाक्रम और राजवंश काल की पुष्टि होती है। चम्बा के छोटे से भूभाग को यह गौरव प्राप्त है कि यहां शिलालेखों, अभिलेखों, ताम्रपत्रों पर प्राचीन काल से आज तक इतिहासिक अवशेष उत्तरी भारत में सब से अधिक पाए गयें हैं। शिलालेखों की संख्या 150 से भी अधिक है, इसी प्रकार ताम्र-पत्र भी। इन शिलालेखों का अभिप्राय धार्मिक रहा है। ताम्रपत्रों और शिलालेखों पर उस समय प्रचलित सम्वत, लोककाल, सप्तर्षि काल शास्त्र सम्वत, पहाड़ी सम्वत दिये हैं। दो तीन-शिलालेखों पर कलियुग सम्वत भी अंकित है यथा सल्ही पन्निहार के शिलालेख पर कलियुग सम्वत 4270 अंकित है।

छठी शताब्दी के मध्य में राजा मारु वर्मा ने ब्रह्मपुर-वर्तमान भरमौर में रघुकुल वंशी वर्तमान चम्बा राज्य की नींव डाली। उस से पूर्व ऐसा दिखाई देता है, कोई व्यवस्थित राज्य नहीं था, छोटी-छोटी रणहौतें थीं, अर्थात छोटे-छोटे क्षेत्रों पर राणाओं का अधिकार था। चम्बा में इस प्रकार के लगभग सौ राणा थे। ब्रह्मपुर-चम्बा के राजाओं ने इन्हीं राणाओं को परास्त कर एक बड़े राज्य, चम्बा को संगठित किया।

पहाड़ी राज्यों और विशेषतया चम्बा रियास्त की इतिहास सामग्री की ओर सब से पहिले ब्रिटिश काल में Sir A. Cunningham ने ध्यान दिलाया जब 1851 में वह चम्बा आया। उसने Archaeological Suruey Reports में इस आशय के लेख दिये। उस के बाद ओ. पी. एच. वोगल ने 1911 में अपनी पुस्तक Antiquities of Chamba State लिख कर विद्वानों का ध्यान चम्बा में मौजूद विपुल पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री की ओर आकर्षित किया। पूर्वकाल के अवशेषों का चम्बा भण्डार है जिन में अनेक भूरीसिंह संग्रहालय में सुरक्षित किये गए हैं।

एक अन्य उल्लेखनीय प्रकाशन डाक्टर हरमन गोइट्ज का "Early Wooden Temples of Chamba" 1955 है।

प्रस्तुत चम्बा राजनीतिक इतिहास की सामग्री के लिये गज़टीयर चम्बा स्टेट भाग ए0 -1904 by जे. अचीसन टी. (2) चम्बा गज़टोयर भाग बी0 - 1963, सम्पादक ठाकुर सेन नेगी, हिमाचल सरकार (3) Archaeological survey of India, New imperial Service (4) Antiquitis of Chamba State Part I by J. Ph. Vogal Ph.D. Superintendent Archaeological Survey of India (5) Antiquities of Chamba State Part II by Dr. B.Ch. Chhabra, (6) History of the Panyab Hill States Volume I & II by J. Hatchison and J.Ph. Vogal से संकलित की है।

चम्बा रियासत का वास्तविक इतिहास साहिल वर्मा से आरम्भ होता है जिन्होंने चम्बा नगर तक और आगे के भी सारे क्षेत्र को विजित कर चम्बा में राजधानी स्थापित की। चारों ओर से ऊंची पर्वत श्रेणियों से घिरा होने के कारण इस पर बाहिर से आक्रमण नहीं हुए और चम्बा के मन्दिर, अवशेष, संस्कृति, परम्परा सुरक्षित रहे। सार्वभौम पर्यटन की दृष्टि से यहां का प्राकृतिक सौंदर्य, रमणीयता, प्राचीन भव्य कलाकृतियों से भरपूर मन्दिर, अन्य अवशेष कलाकृतियां अत्यन्त आकर्षक हैं।

चम्बा के जनजीवन पर धार्मिक विश्वासों का अत्यधिक प्रभाव रहा है। इसी लिए मन्दिरों का बाहुल्य रहा है, पूजा-पाठ, पारस्परिक सहकारिता, प्रेमभाव, सादगी, सच्चाई, ईमानदारी के गुण जन-जन में अभी भी भरे हैं। प्रकृति बड़ी उदार रही। चोरी, हिंसा का नाम नहीं था। जन-जीवन में विविधता है। चुराह, चम्बा, भरमौर, पांगी, लाहौल, भटियात सब के अलग-अलग पहरावे, अलग बोली, संगीत, नृत्य, वाद्य, आमोद-प्रमोद में भी वही विविधता है। इस छोटे से भूभाग पर शान्ति का राज्य रहा। राजा प्रजा पालक थे, अपनी प्रजा से स्नेह करते थे। इसलिये यहां कला का विकास हुआ। कुछ कलाएं तो चम्बा की विशिष्टता रही हैं। चम्बा का पहाड़ी रियास्तों में विशिष्ट स्थान है, इसलिये कहावत प्रसिद्ध है :-

**"चम्बा एक अचम्भा है, हम सब का अवलम्बा है।"**

चम्बा के इतिहास संकलन में जिन पुस्तकों से मैं परोक्ष, अपरोक्ष रूप से ग्रहण कर पाया हूं, उन के प्रति मेरी कृतज्ञता है। संस्कृति इतिहास के संकलन में भी जिन का अनुदान है, योग है, उन का भी धन्यवाद प्रकट करना मेरा कर्तव्य है।

विनीत
**मंगत राम वर्मा**

## प्रथम अध्याय

# प्राचीनता

शताब्दियों से हिमालय की पश्चिमी शृंखलाओं में स्थित चम्बा रियास्त एक स्वतन्त्र राज्य के रूप में प्रसिद्ध रही है। 15 .अप्रैल, 1948 को हिमाचल प्रदेश घोषित होने पर यह प्रान्त के अन्तर्गत विलीन हो गई। चम्बा, पहाड़ी जिलों में, अपनी इतिहासिक पृष्ठभूमि, परातत्व सम्बन्धी अवशेषों और प्राकृतिक लक्षणों के लिये स्मरर्णीय है। डाक्टर एच. वोगल, "चम्बा रियास्त के पूर्वकाल के अवशेष" (Antiquities of Chamba State) के रचयिता के कथनानुसार महत्त्वपूर्ण पहाड़ी प्रदेश के पूर्वकालीन हुये अवशेषों के खजाने को प्रकाशित करने के कार्य में वास्तविक आनन्द का अनुभव होता है, इस प्रदेश की एक लोकप्रिय कहावत द्वारा ठीक रूप से ही "चम्बा एक अचम्भा है" वर्णन किया है। भारत के इतिहास में जहां राजाओं की सम्पूर्ण सूचि तक तैय्यार नहीं कर सकते, राजकीय इत्तिवृत्त नहीं मिलते, वहां इतिहास के सातत्य में चम्बा एक अपवाद है।

चम्बा ज़िला का नाम इस के मुख्य नगर, जो राजाओं के काल में उन की राजधानी थी, से लिया गया है। अब यह जिला का केन्द्र स्थान है। एक लोकप्रिय कहावत के अनुसार राजा साहिल वर्मा ने अपनी पुत्री चम्पावती के नाम पर इस का नाम चम्पा रखा, जो बांद में चम्बा प्रसिद्ध हुआ। कहा जाता है कि राजकुमारी की इच्छानुसार इस जगह को राजधानी के लिये चुना। चम्पावती के नाम से एक मन्दिर नगर के मध्य में अवस्थित है। सम्भवतः यह मन्दिर पहिले से ही स्थित था। कहा जाता है कि राजकुमारी चम्पावती धार्मिक विचारों की थी और वहां एक महात्मा के पास सत्संगति के लिये जाया करती थी। राजा को उस पर सन्देह हुआ। सन्देहशील पिता एक दिन नंगी तलवार हाथ में ले कर उस के पीछे पीछे गया। किन्तु वहां तो कुछ नहीं था। आकाशवाणी हुई कि उस की पुत्री सजा के तौर पर उस से ले ली गई है। राजा को आज्ञा हुई कि वह वहां पर मन्दिर बनवाए। उसी यादगार में वहां मन्दिर चम्पावती बनाया गया।

एक और भी कहानी प्रचलित है कि इस स्थान पर चम्पा फूलों के वृक्ष थे उन्हीं के नाम पर इस स्थान का नाम चम्पा पड़ा। इस सम्बन्ध में शिलालेख भी मिले हैं। जिस काल में इस का नामकरण "चम्बा" हुआ यह एक छोटा सा गांव था। वंशावली में राजा साहिल वर्मा की वीरता के कार्य सम्बन्धी एक श्लोक इस प्रकार लिखा है :-

**विजित्य क्षत्रियान्युद्धं पुरीं चम्पां चकार ह।**
**पुरैव चम्पेननालङ्कृतां देव्याभिरक्षिताम्।**
**चम्पावत्यैव महिषादोन्हत्वेरावती तटे।**

राजा ने क्षत्रियों को युद्ध में हराया और रावी के तट पर चम्बा नगर बसाया जो कि पहिले ही चम्पक वृक्षों से सुशोभित था जिस की चम्पा देवी रक्षा करती थी जिसने महिषासुर

और अन्य का वध किया था। आदि शक्ति भवानी के अनेक नामों में चम्पा भी है। इस चम्पावती मन्दिर जिसे बाद में चमेसनी कहा जाता रहा है, में दुर्गा की मूर्ति है, जिसमें महिषासुर का वधं दिखलाया है। राजतरंगिणी में भी चम्पा ही नाम दिया है। एक अन्य कथा के अनुसार जिसका वणर्न भी वंशावली में है, इसकी नींव एक प्राचीन राजा चम्पा ने डाली।

चम्पा रियास्त की पुरानी राजधानी ब्रह्मपुर जो आज भरमौर कहलाता है, भी। ब्रह्मपुर का वर्णन कई संस्कृत ग्रन्थों में आंता है। ब्रह्मपुर के साथ साथ पाणिनी कालीन भारतवर्ष में चम्पा या आधुनिक चम्बा का भी वर्णन है। गणपाठ अष्टाध्यायी-4/2/82 में भी चम्पा का नाम है जो यह सिद्ध करता है कि उस युग में चम्पा और ब्रह्मपुर दो भिन्न भिन्न क्षेत्र थे तथा उन के अलग अलग गणंपति थे।

मार्कण्डेय पुराण में भी इस क्षेत्र का वर्णन है जो अभिसारजन (जनपद) और राजधानी ब्रह्मपुर नाम से वर्णित है। पाणिनी कालीन भारत में हिमाचल जनपदों की दो प्रमुख इकाइयों में त्रिगर्त संघ में कोण्डो, परथ, दाण्डकी, श्रेष्ट की, जालमीन, जानकी तथा ब्रह्मगुप्त का उल्लेख है। इसी क्षेत्र के लिये पाणिनी काल में गाब्दि का शब्द का प्रचलन उस काल में था जो आज गद्दी का पर्यायवाची समझा जा सकता है। आज भी इस क्षेत्र को गद्देरन संज्ञा दे कर गद्दियों में इसको जोड़ते हैं। एक जनश्रुति के अनुसार-उजड़ा लाहौर बसा भरमौर प्रसिद्ध है।

भारत के अति प्राचीन इतिहास की झलक ऋग्वेद, पुराणों की गाथाओं अथवा जनस्मृति में उपलब्ध होती है। आधुनिक भारतीय इतिहासकारों ने जब भारत वर्ष के इतिहास को लेखनीबद्ध करने का प्रयास किया तो उन्होंने अंग्रेज और योरूपीय इतिहासज्ञों को भी अपना आधार बनाया। अंग्रेजों की नीति विजित जाति के गौरवमय वास्तविक इतिहास के तोड़ मरोड़ कर क्षुद्र रूप में दिखाने की रही। पुरातत्व खोजों से अब वास्तवकिता सामने आने लगी है तो स्वतन्त्र रूप से इतिहास का पुनः मुल्यांकन होगा ही। वैदिक युग का धार्मिक, सामाजिक इतिहास अनेक पीढ़ियों तक ऋषियों, मुनियों से सम्बद्ध है। वेदों की रचना अधिकतर सरस्वती नदी की घाटी और तट के किनारे हुई है, और सरस्वती नदी का उद्गंम स्थल हिमाचल प्रदेश को जिला सिरमौर मान्य हो गया है। इसी भूभाग पर तत्कालीन विजेता सुदास का वर्णन मिलता है जिस की विजय पताका सम्पूर्ण सप्रसिन्धु में फैल गई थी।

संस्कृत वाङ्मय में हिमालय के पांच प्रधान भाग माने गए हैं :- नेपाल, कूर्मांचल (कुमाऊ), केदार (गढ़वाल), काश्मीर तथा त्रिगर्त। त्रि का अर्थ तीन और गर्त शब्द का प्रयोग घाटी के लिये होता है। महाभारत में वर्णित यह प्रदेश रावी और सतलुज के मध्य स्थित था। कांगड़ा का परम्परागत नाम त्रिगर्त है, और इस में चम्बा, मण्डी, कुल्लू, बिलासपुर, हुश्यारपुर और जालन्धर का भूभाग भी शामिल समझा जाता है। कांगड़ा के साथ चम्बा का प्राचीन नाम त्रिगर्त है। पुराणों में वर्णित किरात या कीर जाति का निवास स्थान त्रिगर्त और अन्य पहाड़ी प्रदेश रहे हैं। बैजनाथ मन्दिर की प्रशस्ति में बैजनाथ ग्राम का नाम कीर ग्राम मिलता है। चम्बा के राजाओं और कीरों के युद्धों का भी उल्लेख है। त्रिगर्त राज्य में एक समय सम्भवतः सतलुज और रावी नदियों के बीच का पहाड़ी भाग और जालन्धर द्वाबा का मैदानी भाग रहा है। पहाड़ी

भाग की राजधानी नगरकोट अथवा कांगड़ा था। इस विशाल क्षेत्र में स्वतन्त्र या अर्द्धस्वतन्त्र कई छोटे छोटे पहाड़ी राज्य स्थापित हो गए। जिन में पूर्व में मण्डी, सुकेत, बिलासपुर, बंघाल और पश्चिम में पठानकोट, नूरपुर, चम्बा आदि थे। मुस्लिम आक्रमणों के पश्चात मैदानी भाग यानी जालन्धर द्वाब तो छूट गया और नगरकोट या कांगड़ा मुख्य राजधानी रह गई, जिसके चारों और स्वतन्त्र नये छोटे राज्य बन गए।

संस्कृत साहित्य में त्रिगर्त का वर्णन महाभारत, स्कन्ध, पुराण, विष्णु पुराण, पदम पुराण, हेमकोश, राजतरंगिणी में बार बार आता है। महाभारत में वर्णन है कि त्रिगर्त का राजा सुशर्मा कौरवों का पक्षपाती था और उसने उन के कहने पर मत्स्य राजा विराट पर आक्रमण किया, पांडव राजा विराट के पास शरण लिये हुए थे। इस देश की राजधानी पहले मुल्तान (मूल स्थान) थी, महाभारत युद्ध के पश्चात् पराजय में मुल्तान की भूमि हाथ से निकल गई और यह जालन्धर आ गए और नगरकोट का दुर्ग बनवाया। पौराणिक गाथा है कि चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को देवी के पसीने से अर्द्धरात्री में एक महान मानव का प्रादुर्भाव हुआ। जिस का नाम भूमिचन्द्र पड़ा। इसी भूमिचन्द्र का 234 वीं पीढ़ी में महाभारत कालीन सुशर्मचन्द्र हुआ। इसी शृंखला में 481 वीं पीढ़ी में राजा संसार चन्द हुआ। अंग्रेज इतिहासज्ञ ग्रिफिन के अनुसार - कांगड़ा के राजाओं वंशावली दुनिया के अन्य राजवंशों की अपेक्षा अधिक प्राचीन है, अटूट है। कनिंघम के शब्दों में :- जालंधर और कांगड़ा का राजवंश भारतवर्ष का अति प्राचीन वंशों में से एक है। कांगड़ा राजवंश के प्रथम पुरुष भूमि चन्द्र हुए है, यही कथित रूप में ज्वालामुखी मन्दिर के निर्माता हुए हैं। महाभारत कालीन राजा सुशर्म चन्द्र ने कांगड़ा दुर्ग की स्थापना की।

इतिहासकार हेमचन्द्र ने जालन्धर और त्रिगर्त को समानार्थ कहा है। पदम् पुराण के उत्तरकाण्ड में इस प्रकार वर्णन है :- जालन्धर की उत्त्पति पर पृथ्वी कांपने लगी और रो पड़ी, तीनों लोकों में बड़ी भयंकर गर्जना हुई। ब्रह्मा की समाधि टूट गई, पृथ्वी को भयभीत देख, हंस पर सवार हो समुद्र की ओर गया। ब्रह्मा ने पूछा :- रे समुद्र! व्यर्थ में इतना भयंकर और डरावना शोर क्यों कर रहे हो? समुद्र ने उत्तर दिया- हे देवाधिदेव! मैं नहीं हूं, यह मेरा शक्तिशाली पुत्र है जो गरज रहा है। जब ब्रह्मा ने समुद्र के अद्भुत पुत्र को देखा तो वह आश्चर्यचकित हो गया। बालक ने ब्रह्मा को दाढ़ी से पकड़ लिया। जब बालक से ब्रह्मा अपने को न छुड़ा सका जो समुद्र ने छुड़ाया। ब्रह्मा ने बालक की शक्ति की बड़ी प्रशंसा की। उस का नाम जालन्धर रखा और बड़े प्यार से वर दिया कि वह तीनों भुवनों का भोग करेगा। जब वह बालक बड़ा हुआ तो दैत्यों के गुरु शुक्र आए और समुद्र को कहा कि वह जम्बू द्वीप से हट जाए और जलन्धर के रहने योग्य धरती अपने लहरों से खाली कर दे। शुक्र के इतना कहने पर समुद्र ने अपनी लहरें हटा लीं और तीन सौ कोस धरती खाली शुष्क रहने दी जिस का नाम पवित्र जलन्धर पड़ा। वास्तव में यह पौराणिक कथा एक रूपक है इस तथ्य का कि सिन्धू गंगा का यह सारा मैदानी भूभाग पहले समुद्र था। जलन्धर की समतल भूमि उस का सन्धि बिन्दु था। जलन्धर की कथा इस भौतिक यथार्थता का परम्परागत स्मरर्ण मात्र है। स्थानीय

किवदन्ती है कि जलन्धर राक्षस अपनी पत्नी वृन्दा के सतीत्व से ही अजेय हुआ। वृन्दा को विष्णु ने जलन्धर राक्षस का वेश बदल कर च्युत किया, तभी उस का वध हो सका। जलन्धर नगर का नाम जलन्धर पीठ था। यह प्रदेश व्यास नदी के उत्तर में है, मुख्य स्थान ज्वालामुखी है, पीठ जलन्धर के नीचे है, पांव मुल्तान में है, शेष शरीर सतलुज व्यास नदी घाटी में है। और भी अनेक कथाएं प्रचलित हैं।

## द्वितीय अध्याय

# चम्बा राज्य की स्थिति और सीमा

प्राचीन चम्बा रियास्त अर्थात वर्तमान चम्बा जिला दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम में फैली चार समानान्तर पर्वतीय शाखाओं-जस्कर, पांगी, धौला धार और हाथी धार के बीच में मुख्य हिमालय पर्वत शृंखला में स्थित है। जिस का एक छोर शिवालिक से जा मिलता है। इस के पशिचम और पशिचमोत्तर में जम्मू-कश्मीर के बसोहली, बिल्लौर, भद्रवाह, किश्तवाड़ और पाडर की तहसीलें हैं जिन में से कई इलाके चम्बा के भाग रहे हैं। उत्तर-पूर्व और पूर्व में लद्दाख, लाहौल और बड़ा भंगाल स्थित है। दक्षिण-पूर्व और दक्षिण में कांगड़ा और गुरुदासपुर के जिले हैं। पुराने अनुमान के अनुसार चम्बा रियास्त का क्षेत्रफल 3216 वर्ग मील है जो सर्वे ऑफ इण्डिया (Survey of India) के प्रमाण के अनुसार है। इस जिला के तीन प्रमुख प्राकृतिक विभाग है। सब से प्रमुख विभाग रावी घाटी है जो कि पांगीधार जिसे कश्मीर में पीर पंजाल कहते हैं, और धौला धार के बीच रावी की घाटी बनाता है। इस में रावी नदी और उस की प्रमुख सहायक नदियां-बुढल, तुन्दाह, साहो, सियूल नदियां हैं। इस घाटी में भरमौर, चम्बा और चुराह की तहसीलें सम्मिलित हैं। पांगीधार की चोटियों की ऊंचाई 21,000 फुट तक है जबकि धौलाधार की ऊंचाई 19000 फुट तक है। चम्बा नगर 3200 फुट की ऊंचाई पर रावी नदी के किनारे स्थित है। रावी नदी के ऊपरी भाग में भरमौर की तहसील है जिसे गद्देरन भी कहते हैं। भरमौर तहसील के लोग सर्दियों में निचले इलाकों कांगड़ा, मटियात, चम्बा में आ जाते हैं जिसे अपनी बोली में 'जान्धर जाना' कहते है।। भरमौर में रावी की दो मुख्य सहायक नदियां बुढल और तुन्दाह है। प्रसिद्ध तीर्थस्थल कैलाश अथवा मनी महेश और प्राचीन राजधानी ब्रह्मपुर अथवा भरमौर इसी तहसील में स्थित हैं। सारी चुराह तहसील का पानी सियूल नदी द्वारा रावी में मिलता है। धौला धार रावी घाटी और व्यास घाटी को अलग करता है। सियूल नदी और उस के सहायक नदी नालों से जो घाटी बनी है, वही चुराह तहसील है। शायद चुराह नाम चतुरांश का अपभ्रंश है। यह अनुमान है कि चम्बा को राजधानी बनाने के पश्चात ही ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी में इस इलाका के राणाओं को विजित किया। इस तहसील के कुछ भाग भलेई, जूंहड आदि पर कभी पड़ोसी रियास्त बिल्लौर (संस्कृत बल्लापुर) का भी अधिकार रहा होगा।

### पांगी घाटी अथवा चनाव-चन्द्र भागा घाटी

यह चम्बा का दूरस्थ उत्तरी भाग पांगी (पीर पंजाल) और जस्कर घाटी जिसे गुरु धार भी कहते हैं, के बीच में बड़ी ऊंचाई पर स्थित है। अस्सी मील लम्बे मार्ग पर थरोट नाला से संसारी नाला (पाडर की सीमा) तक फैली चन्द्र भागा की यह घाटी पांगी नाम से जानी जाती है। पहले यह घाटी दो भागों में रही है, रौली से थरोट तक चम्बा लाहौल और थरोट से गनौर नाला तक पांगी घाटी। पांगी में जस्कर धार की ऊंचाई 22,000 फुट तक जाती है। इस प्रकार यह सुन्दर, हरी भरी घाटी दोनों ओर आकाशचुम्बी हिमाच्छादित पर्वतों से घिरी और तीव्र प्रवाह वाली महान चन्द्र भागा के कल कल स्वर से गुंजायेमान बड़ी आकर्षक है। पांगी

में छोटी, सुन्दर घाटियां सुराल, हुण्डन, सैचू और परमार की है। इस घाटी में 12,000 फुट तक बस्ती है। अधिक ऊंचाई पर भोट रहते हैं, इन के आकार मंगोलियन हैं। इस बस्ती को भटोरी कहते हैं। पांगी में अन्न की एक ही फसल-गन्दम, जौ, ऐल, भरेस, फुल्लन होती है। यहां उत्तम कोटि का घास होता है, उन चरागाहों को गाहर, त्रकड़ कहते हैं, यहां गर्मियों में भेड़ बकरी चराने के लिये लाई जाती हैं। पांगी घाटी दुर्गम है।

दो शिलालेखों से पता चलता है कि यहां किसी तिब्बती शक्ति का राज्य रहा है किन्तु बारहवीं शताब्दी में पांगी चम्बा रियास्त का भाग था।

धौंला धार और हाथी धार के बीच व्यास की सहायक नदियों चक्की आदि का प्रवाह-मार्ग है, भटियात तहसील कहलाता है। भौगोलिक दृष्टि से यह कांगड़ा घाटी का भाग था, जिन में दस इस प्रकार हैं :- बाथरी, शेरपुर, नगाल, चूहन, हुबार, चवाड़ी, रैपुर, टूण्डी, सिंयूहता और भट्टी टिकरी। भटियात के राजा संग्राम वर्मा ने चम्बा रियास्त में शामिल किया जिस का पता उस जमीन के पट्टा से चलता है जो उसने अपने पुरोहित को हुबार में शास्त्र संवत् 22 (1446 ई.) में दान दी थी। राजा गणेश वर्मा ने वहां एक छोटा सा किला गणेशगढ़ नाम से बनवाया था। भटियात का नाम भट्टी जाति के नाम पर पड़ा। धौलाधार के दक्षिण की ओर रिहलू का इलाका कभी चम्बा रियास्त का भाग रहा है।

चम्बा रियास्त की मुख्य नदी रावी है जो बड़ा बंधाल से निकलती है। इस का प्राचीन संस्कृत नाम ईरावती है। रावी का ऊपरला भाग भरमौर गद्देरन है। ऐतिहासिक दृष्टि से भरमौर प्रसिद्ध है, क्योंकि पहिले यहीं राज्य स्थापित हुआ था। यहां की बोली और नामों में संस्कृत का बाहुल्य है। उदाहरणतया त्रेहटा नाम त्रिघटक से, देवला नाम देवालय से, गोठ संस्कृत शब्द गोष्ट से जिस का अर्थ गडरियों की बस्ती है, दुर्गेठी-दुर्गति से और कुगति इस प्रकार ग्रामों के नाम हैं।

रावी नदी के किनारे बाईं ओर होली, त्रेहटा, उलांसा, रणूंह कोठी, प्यूहरा के परगना हैं, इन के आगे बढ़ते हुए नदी के दाईं ओर कलन्दरा, सामरा, पंजला के परगना हैं तो बांईं ओर बस्सू, बकानी, महला, भड़ियां और कड़ेड के परगना है। चम्बा नगर रावी और साल अथवा साहो नदियों के संगम पर एक शालिक पर स्थित बड़ा रमणीक स्थान है। मध्य में राजमहल, धौगान के नाम से प्रसिद्ध हरा भरा, लम्बा-चौड़ा क्षेत्र है जिस के चारों ओर बाजार, राजकीय कार्यालय, उत्तरी किनारे पर हस्पताल और दक्षिण किनारे पर सर्कट हाऊस नगर की शोभा को चार चान्द लगा देते हैं।

साल के किनारे भव्य स्थान साहो है जो साहो परगना का हैडक्वार्टर है। यहां प्रसिद्ध चन्द्रशेखर का मन्दिर है। साल में रावी संगम के आधे मार्ग पर होल नाला मिलता है जो उसी नाम के परगना से आता है जो अब गुदयाल कहलाता है। चम्बा तहसील में चम्बा नगर के नीचे राजनगर, उदयपुर, धुन्धी, खड़ौट, त्र्योद परगाना हैं।

रावी की सब से बड़ी सहायक नदी सियूल चम्बा नगर से 21 किलोमीटर नीचे मिलती है जो चुराह का सारा पानी लाती है। इस की दो शाखाएं हैं। एक शाखा पघरी जोत से भान्दल,

किहार, डियूर, हिमगिरि से होता हुआ बहता है। प्राचीन शिलालेखों पर हिमगिरि का नाम किश्किन्धा लिखा है जो पहिले समय एक राणा की रणोहत थी। किहार में भी इसी प्रकार एक राणा था जिन के उल्लेख शिलालेखों में मिलता है।

सियूल की पूर्वी शाखा साच जोत से निकलती है, इस का नाम चांजू जोत है। यह पूर्वी चुराह के सारे पानी को इकट्ठा कर पधरी खड्ड-सियूल में मिल जाती है।

चम्बा रियास्त की दूसरी बड़ी नदी चन्द्र भागा है। यह लाहौल से दो भागों चन्द्र और भागा नदियों के रूप में निकलती है। इन के चन्द्र भागा और सूर्य भागा इस प्रकार भी दो नाम हैं, तीन्दी में यह दोनों मिलकर चन्द्रभागा बन जाती है। चम्बा में चन्द्र भागा के किनारे पहला ग्राम सिहंवाड़ी है। थरोट ग्राम के पांच मील नीचे त्रिलोकनाथ का बौद्ध-मन्दिर है। यहां बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की मूर्ति है जिसे बुद्ध और हिन्दू, तीनों लोकों के स्वामी के रूप में मानते हैं। यह प्रसिद्ध तीर्थ है। 1863 में हिमपर्वत गिरने से सारा ग्राम बह गया किन्तु मन्दिर बच गया।

इस के तीन मील नीचे मयाड़ नाला मिलता है। यहां काली का मन्दिर है जो लकड़ी की अनुपम खुदाई के लिये प्रसिद्ध है। इस का स्थानीय नाम मरकुला देवी है। चन्द्र भागा लाहौल, पांगी के परगाना किलाड़ घरवास से बहती हुई लुजग्राम से तीन मील नीचे पाडर में प्रवेश कर जाती है। साच परगाना में मिंदल में चामुण्डी का मन्दिर है। लुज में एक सरोवर का शिलालेख है, 1105-6 ई. का, जो राजा जष्ट ने खुदवाया है। सालही के शिलालेख पर अनेक देवी-देवताओं के चित्र राजा ललित वर्मा के काल के 1107 ई. के खुदे हैं।

डल्हौजी छावनी और नगर 1851 ई. में अंग्रेजों ने स्थापित किया। पठानकोट-उल्हौजी मोटर सड़क आधुनिक काल में बनी है। चवाड़ी की सड़क चम्बा-कांगड़ा की मुख्य यातायात का मार्ग था। चवाड़ी से बायीं ओर सिंयूहता होती हुई शाहपुर पहुंचती है और दक्षिण-पश्चिम की सड़क नूरपुर, जहां यह मुख्य कांगड़ा-पठानकोट सड़क से मिल जाती है।

चम्बा जिला एक विस्तृत पहाड़ी क्षेत्र है जिस की पर्वत श्रृंखलाएं 20,000 फुट की ऊंचाई तक फैली हैं। इसलिये इस्में भान्ति भान्ति का जलवायु, कृषि उपज और वन-सम्पदा उत्पन्न होती है। इसी प्रकार जंगली जीव भी हर प्रकार की जलवायु में मिलने वाले उपलब्ध हैं। व्यास घाटी, भटियात की ऊंचाई कम है, वर्षा ऋतु में वर्षा अधिक होती है। पानी, नदी नालों की बहुतात है, इसलिये धान, मक्की और सर्दियों में गन्दम, जौ की पैदावार होती है। आम, पीपल, बांस, धम्मन के वृक्ष पाए जाते है। हाथी धार में और धौला धार के निचले भागों में चील के पेड़ मिलते हैं।

रावी घाटी में वर्षा ऋतु के अतिरिक्त सर्दियों में भी वर्षा होती है और बहुधा सर्दियों में हिमपात होता है। मक्की की फसल प्रमुख है। इसके अतिरिक्त दाल माश, फुल्लन, आलू, गन्दम, जौ की उत्पत्ति होती, फुल्लन और सियूल की काशत भी होती है। वन्य पैदावार में अत्तीस, पत्तीस, कड़ू, बनफशा, गुच्छी, बन कक्कड़ी, किन्स है। जंगलों में चील से लेकर देवदार,

तोस, कायल, बन पत्तीवाले पेड़ आदि पाए जाते हैं। अखरोट के पेड़ भी पाए जाते हैं अब तो सेब, नाशपाती, आलूबुखारा के अनेक बागीचे तैय्यार हो गए हैं। सब्जियों में बाहिर भेजी जाने वाली सब्जियां मटर, टमाटर व्यवसायिक स्तर पर पैदा होने लगी हैं। हर वर्ष करोड़ों रुपये की इमारती लकड़ी बाहिर भेजी जाती है।

पांगी का इलाका अधिक ऊंचाई पर स्थित है, वर्षा ऋतु में वर्षा बहुत कम होती है, किन्तु हिम-पात बहुत अधिक इसलिये यहां वर्ष में एक ही उपज जौ, फुल्लन, भरेस होती है। यहां का काला जीरा और ठांगी प्रसिद्ध है। जंगलों में देवदयार, कायल के वृक्षों की लकड़ी चन्द्र भागा नदी के द्वारा बाहिर भेजी जाती है। भरमौर, चुराह, पांगी में भेढ़-बकरी पालन का काम होता है। लाहौल-पांगी में ग्यारह-बारह हजार फुट से अधिक ऊंचाई पर वन नहीं पाए जाते हैं, घास की चरागाहें हैं। यहां भेड़-बकरी चराने के लिये लाई जाती है। चम्बा और चुराह तहसीलों में गर्मियों में सात-आठ हज़ार फुट की ऊंचाई तक गुज्जर भैंसे चराने के लिये लेकर आ जाते हैं और सर्दियों के आरम्भ में पंजाब को ले जाते हैं। पांगी में वनों में लाल भालू, सफेद चीता और कस्तूरा पाए जाते हैं। भरमौर, चम्बा, चुराह में चीता, रीछ, गमगुहल में बारह सिंगा पाए जाते हैं। पक्षी जाति में प्रसिद्ध नीलगर (मनाल) फुलगर, गलौन्द आदि हैं।

## धातु

चम्बा जिला प्राचीन रियास्त में अनेक प्रकार के खनिज पदार्थ उपलब्ध हैं। चुराह तहसील के कल्हेल ग्राम से ले कर चम्बा तहसील में गुदयाल और साहो में भारत वर्ष का सब से बड़ा और उत्तम कोटि के चूना पत्थर का भण्डार उपलब्ध है। चम्बा तहसील में कई स्थानों पर चुराह और भटियात में भी बढ़िया प्रकार का स्लेट पत्थर की खानें हैं। चम्बा तहसील के साहो और होल में तांबा की खानें हैं। साहों के प्रसिद्ध चन्द्रशेखर मन्दिर पर जो तांबा बर्ता गया है वहीं से निकाला गया है। होल में एक ग्राम बंजाह है, उस ग्राम के रहने वालों को धाई कहते हैं, वहां अब भी उन कच्चे पत्थरों के बड़े-बड़े ढेर मौजूद हैं, जिन से तांबा निकाला गया है। चुराह में बिल्लौर उपलब्ध हैं। पांगी घाटी में अबरक है, वहां धरवास में अबरक के पानी के पनिहार हैं जहां क्षयरोग के बीमार इलाज के लिये जाते थे। पांगी में सोने की खाने होने की सम्भावना है, क्योंकि चन्द्र भागा की रेत से सोने के कण इकट्ठे किये जाते हैं।

## चम्बा में प्रसिद्ध डल

चम्बा में प्रसिद्ध डल मनीमहेश, खजियार, लम्मा डल और महाकाली डल हैं।

मनीमहेश :- शिव भक्तों के लिये मनीमहेश-कैलाश की बड़ी मान्यता है। यह तीर्थ स्थान चम्बा जनपद की भरमौर तहसील में धौलाधार पर्वत शृंखला पर, चम्बा नगर से लगभग 80 किलो मीटर पर स्थित है। 16,000 फुट की ऊंचाई पर मनीमहेश का पावन डल स्थित है। इसके दोनों ओर ऊंचे पर्वत और सामने 18,567 फुट की ऊंचाई पर गगनचुम्बी परम पावन शिव धाम कैलाश है। डल के शीत उज्जवल जल में भाद्र मास की कृषाष्टमी तथा राधाष्टमी को स्नान करते हैं। मेले में दूर दूर से सहस्रों यात्री आते हैं और स्नान करते हैं, दान-दक्षिणा

पवित्र कैलाश शिखर के अंक में पवित्र सरोवर

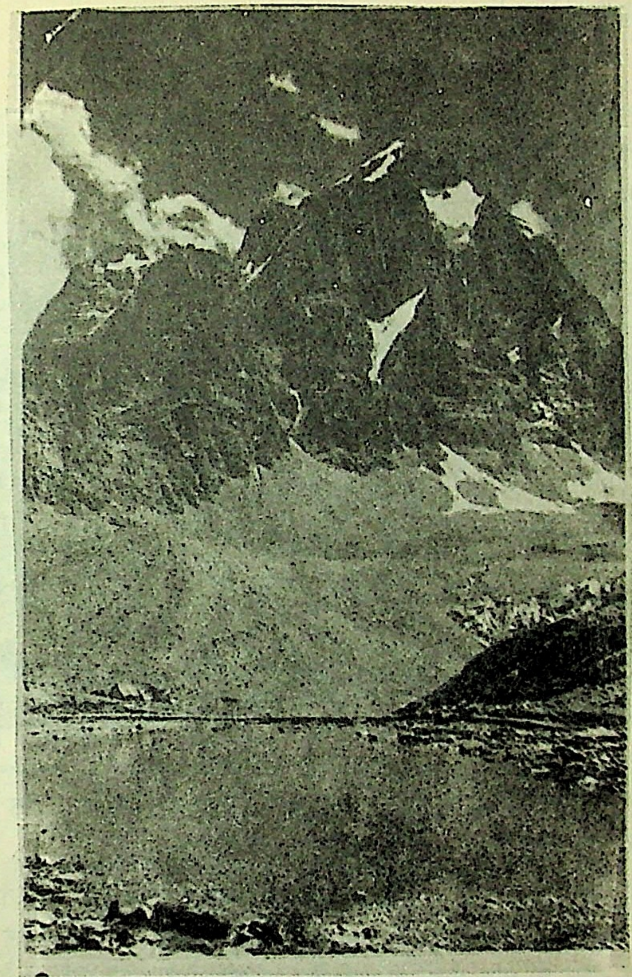

देते हैं। किंवदन्ती है कि महाभारत काल में भी यहां यात्रा होती थी और पाण्डवों का आगमन हुआ था।

खजियार :- यह अति प्रसिद्ध पर्यटक स्थल है, जिस की तुलना में कश्मीर का पहलगाम भी कम बैठता है। चम्बा-डलहौजी मार्ग के मध्य में अति सुन्दर, सौम्य प्राकृतिक छटा से परिपूर्ण स्थान समुद्र तल से 6300 फुट की ऊंचाई पर यह पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। चारों ओर देवदार के पर्वतीय जंगलों से घिरे एक हरे भरे मैदान के बीच में एक छोटी डल अति मनमोहक दृश्य उपस्थित करता है जो वर्णातीत है। इस दृश्य को देख कर लार्ड कर्जन के निम्न उद्‌गार प्रस्फुटित हुए थे :-

Nesthing amongst the higher hills, surrounded by the snows, Chamba messes half our ills, and all our lesser woes. A gentle raja rules the

Land, with firm but gentle hands. Oh! Who could wish for a better fate than Chamba's hillhid Lands.

*खजियार डल*

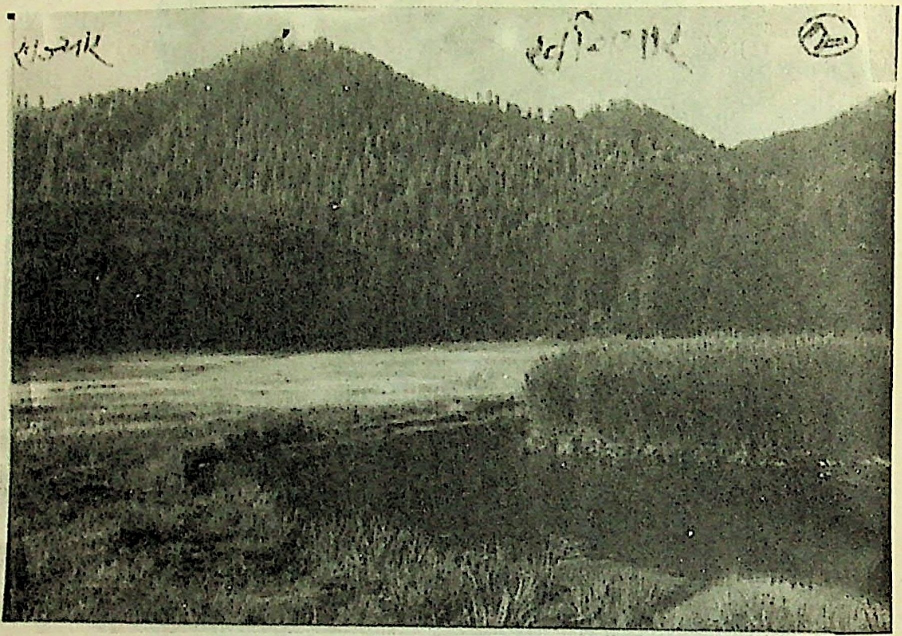

पर्यटकों की सुविधा के लिये यहां पर लोक निर्माण-विभाग और पर्यटक निगम की ओर से विश्राम गृह बने हैं। इस स्थान की अनुपम प्राकृतिक छटा के कारण इस की ख्याति अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हो कर इसे लघु स्विटजरलैण्ड घोषित किया है।

लम्मड़ डल :- चम्बा नगर से भरमौर की ओर लगभग तीस मील पर धौलाधार की भीतरी तलहटी परगाना बस्सू में स्थित यह सात झीलों का जमघट है। ये झीलें प्याले के आकार की हैं और एक दूसरे के साथ पत्थर से जुड़ी है। सातवीं झील अण्डाकार भी है। सब को मिला कर लम्मा डल कहते हैं। इसका घेरा लगभग डेढ़ मील है जो समुद्र तल से 12000 फुट ऊंचाई पर एक बड़े समतल मैदान में फैली हुई है। चारों ओर सूखे पहाड़ खड़ें हैं। जिस की परछाई के साथ वायु के तेज झोंकों से झील में सुन्दर रंग बिरंगे झरोखे, बाग-बागीचे, महल दिखाई देते हैं। यहां जाने का मार्ग काफी कठिन है।

महाकाली :- समुद्र तल से तेरह हजार फुट की ऊंचाई पर चांजू में जहां तुन्दाह (भरमौर), सौंहो और गुदयाल की सीमाएं मिलती है, एक बड़े चौकोर मैदान में, जहां एक ओर ऊंचा मर्कत, दूसरी ओर रेतीली दलदल, तीसरी और हरी घास का मैदान और चौथी ओर छोटी सी पहाड़ी है, वहीं पर दो मील तक फैला साफ पानी है, यही महाकाली का डल है। छोटी पहाड़ी पर भगवती की पीतल की मूर्ति विराजमान है। यहां हर वर्ष भादों मास के पहले मंगलवार को भारी मेला लगता है।

## तृतीय अध्याय

# राज्य व्यवस्था

राजाओं के काल में चम्बा रियास्त का प्रबन्ध एक सरल किन्तु उत्तम व्यवस्था के अधीन चलता रहा। लोग धर्म परायण थे, इसलिये चोरी-डाके, हत्याएं और पारस्परिक झगड़े नहीं के बराबर थे। लोग घरों को ताला नहीं लगाते थे, सर्वसाधारण ईमानदार, धर्मभीरु थे। राज्य का प्रबन्ध दृढ़ नींव पर स्थिर था। राजा के प्रति लोगों की बड़ी श्रद्धा रहती थी और उसे विष्णु का अवतार मानते थे। राजा भी न्यायप्रिय और प्रजापालक होते थे। कोई राजा अत्याचारी, निरंकुश हुआ हो, यह सारे इतिहास में ढूंढने को नहीं मिलेगा। हां ऐसे उदाहरण मिले हैं कि जब राजा ने प्रजा के धन का दान में या विलासिता में व्यय किया हो तो परामर्श-मण्डल ने उसे अधिकार वंचित कर समीपतम उत्तराधिकारी को राजगद्दी पर बिठाया। राजवंश परम्परागत सूर्यवंशी था, राज्य की स्थापना पांचवीं शताब्दी में राजा मेरुवर्मन ने की थी जो सूर्यवंशी कुल से राम का वंशज था। राजा अपने नाम के साथ वर्मन या वर्मा प्रत्यय लगाते थे। यह सोलहवीं शताब्दी के अन्त तक चलता रहा। इसके पश्चात सिंह जो राजपूत अपने नाम के साथ जोड़ते हैं, का प्रयोग होने लगा। हर राजा के नाम के साथ 'देव' राजकीय पहचान के तौर पर जोड़ा जाता है। इसीलिये जयदेवा मूलतः जयतुदेवः का अभिवादन प्रयुक्त होता रहा है। राजा के उत्तराधिकारी बड़े लड़के को युवराज कहते थे। यह पदवी भी सोलहवीं शताब्दी तक प्रयुक्त होती रही है। तत्पश्चात युवराज के स्थान 'टिक्का' शब्द प्रयोग में आया और छोटे राजकुमारों को क्रमशः दुथाई, त्रिथाई, चौथाई कहते थे। राजा के भाइयों और टिक्का के अतिरिक्त अन्य राजपुत्रों को जहांगीर ने 'मियां' शब्द दिया।

सारी रियास्त वजारत अथवा तहसीलों में विभक्त थी, इस विभाजन का आधार भौगोलिक, भाषाई और पोशाक था। इस प्रकार पांच वजारतों-भटियात, चम्बा, भरमौर, चुराह और पांगी-लाहौल में राज्य विभक्त था। राज्य प्रबन्ध की दृष्टि से सारी रियास्त चौरासी परगनों में बांटी गई थी, यह सूचि राज्य के विस्तार या संकोचन के साथ बढ़ती,घटती रहती थी। परगना अर्थात मण्डला परगना की सीमा का आधार भी भौगोलिक रहता था। प्राचीन काल में मण्डल-परगाना के मुखिया को विषय-पति कहते थे, जिसे बाद में चाड़ की संज्ञा दी गई। चम्बा के पट्टों और बंगाल के पालवंश के राजा विग्रह पाल और नारायण पाल के काल के ताम्रपत्रों पर जो राज्य अधिकारियों की सूचि दी है, उन में समानता है। इन नामों का वर्णन मिलता है - राजा, राजांक, राजपुत्र, राजामात्य, राजाधिराज आदि

महामात्य अर्थात् प्रधानमंत्री

राजामात्य- मंत्री जो राजा के साथ जुड़ा होता है अर्थात प्राइवेट सैक्रटरी - निजी सचिव

राजस्थानीय-मुख्य न्यायाधीश

प्रमात्र - न्यायधीश

सन्धि विग्रहिक- विदेश मंत्री

महादण्डनायक - आरक्षि-अधीक्षक

महाबलाधिकृत - सेनापति

दान पट्टक - पटा

पट्टोपाध्याय- राजकीय अभिलेखों की निगरानी करने वाला अधिकारी करणिक या करण-कायस्थ-अभिलेख लेखक

लेखक के लिये महता शव्द का प्रयोग किया गया है।

परगना के कारिन्दों में कार्य का बंटवारा इस प्रकार था- चाड़ परगना का कार्यकारी मुखिया होता था, उस की सहायता के लिये एक बरटाल (बांधने वाला सिपाही) होता था। इसके अतिरिक्त झुटियार जिसके जिम्मा सरकारी हुक्मनामा की तामील करवाना, बुलावे का काम करना आदि था। परगाना का अन्य प्रमुख अधिकारी लिखन्यरा होता था जो अपने परगना के मोलिया का हिसाब रखता और उस का आर्थिक प्रबन्ध करता था, उस का सहायक उग्राहका होता था जो घर-घर से मोलिया इकट्ठा करता था। हर एक परगना में एक सरकारी कोष्ठागार होता था जहां अन्न के रूप में जो कर इकट्ठा किया जाता था, वह जमा रहता था। यह अकाल की अवस्था में या अन्न के अभाव में जनता को सस्ते दामों में दिया जाता था। अन्य राज्य व्यवस्था राजधानी में ही केन्द्रित थी। न्यायालय, पुलिस, खजाना, सेना की छावनी अन्य कार्यालय चम्बा में केन्द्रित थे।

रावी घाटी की तीन बोलियां चम्बयाली, चुराही, भरमौरी संस्कृत से ही निकली है, उदाहरण के लिये :-

| संस्कृत | चम्बयाली | भरमौरी | चुराही |
|---|---|---|---|
| एक | इक्क | इक्क | इक्क |
| द्वि | दो | द्वि | द्वि |
| त्रेय | त्रै | त्रै | त्रै |
| चत्वार | चार | चौर | चौर |
| जानु | जानु | जानु | जानु |
| गौ | गा | गा | गा |
| देवगृह | देहरा | देहरा | देहरा |
| क्षेत्र | खेत्र | ख़ेत्र | पट्टी |
| मातृ | अम्मा मां | इजे | मां/अम्मा |
| भगिनी | दीदी/बहिन | | बहिन दीदी |

| | | | |
|---|---|---|---|
| अहं | हौं | हौं | अऊं |
| सः | से | सो | सै |
| युवम् | तुसी | तू | तू |

हिन्दी - वह स्कूल जायगा। चम्बयाली - तिनी स्कूला जो जाना

भरमौरी - तिस स्कूला गाहना । चुराही - सै स्कूल जे गाहला

हिन्दी - प्रताप दूध पी चुका है । चम्बयाली - प्रताप दुध पी बठोरा ऐ।

भरमौरी - प्रताप दुध पी बिठूरा । चुराही - प्रताप दुध पी बिठोरा आ।

## लिपि

ईसा से पहले और तुरन्त बाद चम्बा में देश के अन्य भागों की भान्ति ब्राह्मी लिपि और खरोष्ठी की लिपि प्रचलित थी। रियास्त में प्राचीनतम शिलालेख गुप्तलिपि में उपलब्ध हुए हैं। इन में पनाली नाला के चट्टान के लेख और राजा मेरु वर्मा के चार मूर्तियों के लेख इसी लिपि में हैं। इस के पश्चात् सब लेख शारदा लिपि में हैं। कश्मीर का नाम शारदा देस या शारदा मण्डल था। ऐसा समझा जा सकता है कि शारदा लिपि का मूल स्थान कश्मीर है। पंजाब और अफगानिस्तान में भी यही लिपि प्रचलित थी। एक अभिलेख से यही प्रतीत होता है कि शाही राजवंश के समय और मुस्लिम विजय से पहिले प्राचीन गान्धार में भी यही लिपि प्रयुक्त होती थी। एक अभिलेख स्वात में हमीर के राज्य काल का मिला है जो शारदा में है। वास्तव में अरबों का अमीर-हमीर से ही बना है। दिल्ली के इर्द गिर्द भी शारदा का प्रयोग था। नागरी विद्वान लोग प्रयोग करते थे। शारदा का प्रयोग 500 ई. से प्रारम्भ होकर नवीं शताब्दी तक विकसित अवस्था में पहुंच चुका था जैसा कि सराहन की प्रशस्ति से पता चलता है।

शादरा लिपि का प्रयोग तेरहवीं शताब्दी तक चलता रहा। उसके पश्चचात् जो लिपि यहां प्रयोग में आई उसे देवाशेस नाम दिया है। अठारंवीं शताब्दी में चम्बा में जिस नागरी लिपि का प्रयोग प्रारम्भ हुआ उसे टाकरी नाम दिया गया। टाकरी पंजाब की समस्त पहाड़ी रियास्तों में सिवाय शिमला के प्रयोग होती रही है। हर पहाड़ी राज्य की अपने प्रकार की टाकरी रही है। जम्मू में इसे डोगरी नाम दिया गया। टाकरी का जन्म महाजनी से लगता है। आजकल की पंजाब की लिपि गुरुमुखी प्राचीन शारदा की वंशज है। कुछ वर्ण -क, ज, न, ण, य, ल, व और र, ह का विशेष विकास है, अन्य ज़ू क़े नृ हैं।

## भाषा विकास

ऋग्वेद की संस्कृत से सर्वमान्य संस्कृत विकसित हुई। चम्बा की बोलियों विशेषतः भरमौरी में अभी तक संस्कृत के तत्सम ओर तदभव शब्दों का बाहुल्य है। पाणिनी ने प्राचीन संस्कृत को क्रमबद्ध कर विश्व की अनेक भाषाओं की जननी बना दिया। इस प्रकार संस्कृत ने विश्व की दिग्विजय देवभाषा के रूप में प्रारम्भ की। कालगति के साथ इस में परिवर्तन आते

गए और इस का विकास देसी भाषाओं प्राकृत, अर्धमाग्धी प्राकृत, मार्रधी, अपभ्रंश के रूप में कालान्तर में हुआ। जैन, बौद्ध साहित्य इन्हीं भाषाओं में लिखा गया है। प्राकृत से पहली शताब्दी ईसा और छठी शताब्दी ईसा के बीच अपभ्रंश भाषा का विकास हुआ और इससे शौरसेनी, माग्धी, अर्धमाग्धी, महाराष्ट्री, पैशाची, अवधी, गुर्जर, पांचाली आदि भाषाएं विकसित हुईं। पहाड़ी बोलियों के संदर्भ में शौरसेनी का महत्व है। अपभ्रंश का विकास 500 ई. से 1200 ई. के बीच हुआ। हिमालय की पहाड़ी बोलियों का 'रवस' से भी निकट का सम्बन्ध है। इसी प्रकार पश्चिमी पहाड़ी बोलियों पर पश्चिमी हिन्दी और पश्चिमी राजस्थानी का प्रभाव और सामीप्य है।

नेपाल से भद्रवाह तक के पहाड़ी क्षेत्र में बोली जाने वाली बोलियां पहाड़ी परिवार से हैं। गढ़वाल से शिमला तक के पहाड़ी क्षेत्र को सप्तलक्ष अर्थात सवा लाख पहाड़ियों का क्षेत्र और आजकल शिवालिक कहते हैं। इस प्रदेश में रहने वालों को कनात या रक्स कहते हैं। महाभारत, स्मृति और हरिवंश पुराण में इन का वर्णन पश्चिमोत्तर प्रदेश के वासी और पिशाच कहा गया है। गुर्जर अथवा गुज्जर समुदाय ने राजस्थान के इतिहास में मुख्य भूमिका निभाई है। वे शिवालिक के इस समुदाय से मिलजुल गए।

## चम्बा की बोलियां

बोलियों की दृष्टि से चम्बा जनपद एक दिलचस्प क्षेत्र है। लगभग तीन हजार वर्ग मील के इस क्षेत्र में ये अलग-अलग बोलियां हैं। जिन में से पांच का सम्बन्ध संस्कृत के परिवार से है। जस्कर और पांगी धार के बीच पांगी में पंगवाली और लाहौल में लाहौली बोली जाती है। हाथी धार और धौलाधार के बीच की तहसील भटियात में जो बोली जाती है उसे भटियाली कहते हैं, यह बोली कांगड़ा की बोली से मिलती है। पांगी धार और धौला धार के बीच अर्थात रावी की घाटी में तीन तहसीलें चुराह, चम्बा और भरमौर की तीन अलग अलग बोलियां चुराही, चम्बा याली और भरमौरी है। चुराही बोली का कश्मीरी की ओर झुकाव है। इस का कारण है कि यह क्षेत्र जम्मू-कश्मीर के साथ संलग्न है। जैसे चुराह का सम्पर्क या आवागमन चम्बा के साथ बढ़ा चम्बयाली का प्रभाव चुराही पर भी पड़ा। भरमौर ज्यादा कठिन पहाड़ी भाग है, इसलिये इस पर बाह्य प्रभाव कम पड़ा है। इसलिये भरमौरी बोली में संस्कृत के तत्सम् और तद्भव शब्दों का बाहुल्य है। यह बोली अपभ्रंश के बहुत समीप है।

चम्बयाली के धातु का अन्तं 'रा' में होता है; जैसे चलोरा, बिठोरा (बैठा), ऐसे ही चुराही का भी-बिठोरा। चम्बयाली में भविष्यत क़ाल का ला, ले, ली से दिखाते हैं, जैसें रहला, खाला, रहले, लिखली। चुराही में नी, नू जैसे जाना है को गाहनु। तीनों बोलियों के धातु के अन्त में ओरा् लगता है, जैसे ग्योरा (गया), सुतोरा (सोता है)।

## सिक्का

चम्बा का अपना सिक्का प्रचलित रहा है जो तांबे का था और जिसे चकली कहते थे। नकली एक चांदी का सिक्का प्राप्त हुआ है।

## चतुर्थ अध्याय

# चम्बा इतिहास के माध्यम

वंशावली - प्राचीन काल से भारत के राजवंशों और उच्च घरानों में यह परम्परा रही है कि वह अपनी वंशावली का प्रमाण-पत्र रखते हैं। कल्हन ने अनेक राजाओं की वंशावलियों का राजतंरगिणी लिखते समय वर्णन किया है जिन्हें उसने अध्ययन किया। इतिहासकार कनिंधम ने वंशावलियों के महत्त्व को जान कर ही कांगड़ा के कटोच वंश के नामों की लम्बी लड़ी को विश्वसनीय माना। श्री जे. वोगल, पी. एच. डी. सुपरिटैण्डेण्ट आरक्यौलिजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, नार्दन सर्कल, और चम्बा के पूर्व काल के अवशेष के रचयिता ने लिखा है। कि चम्बा के राजगुरु द्वारा सुरक्षित रखी हुई चम्बा की वंशावली एक अग्निकाण्ड में दुर्घटनावश ध्वस्त हो गई। संस्कृत हस्तलिपि के अतिरिक्त भाषा में वंशावलियां हैं। संस्कृत वंशावली के 120 श्लोक अनुष्टुप छन्द में हैं जिन का महाकाव्य में प्रयोग होता है। इसके दो भाग हैं। एक भाग पौराणिक है। इस में 34 श्लोक हैं जो पुराणों के आधार पर हैं। इसमें 112 राजाओं के नाम हैं जो भागवत् पुराण-स्कन्ध 9 अध्याय 1-12 के हैं। सूर्यवंश के आदि पूर्वपुरुष नारायण हैं, तत्पश्चात ब्रह्म मारीची, कश्यप, विवश्वत मनु। इस प्रकार चालीसवां नाम भागीरथ का है। बीसवें श्लोक में राम का नाम है। 81 वां नाम मरु का है जो कि काल्पा गांव में बस गया था।

चम्बा के इतिहास की शृंखलाओं को सुरक्षित रखने में विदेशी विद्वानों का स्वतन्त्रता के पूर्व के वर्षों में प्रशसनीय योगदान रहा है। इन्हीं विद्वानों ने यहां की पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री का चयन, अनुशीलन तथा अध्ययन किया अन्यथा यहां की ऐतिहासिक कड़ियां भी समय के गर्भ में तिरोहित हो गई होतीं। चम्बा का इतिहास चम्बा के विषय में लिखी पुस्तकों तथा चम्बा के भूरी सिंह संग्राहलय के चित्रों, सिक्कों, शिलालेखों तथा मूर्तियों से ज्ञात होता है। सर्वप्रथम जनरल कनिंधम ने 1839 के अपने प्रवास में यहां की सांस्कृतिक तथा इतिहासिक धरोहर पर प्रकाश डाला। कुछ शिलालेखों तथा ताम्रपत्रों का उन्होंने अध्ययन किया और चम्बा के विषय में विद्वत्तापूर्ण लेख Archaeological Report IV में प्रकाशित किया। उसके बाद जे. पी. एच. वोगल ने 1911 में अपनी पुस्तक Antiquities of Chamba State लिखकर विद्वानों का ध्यान चम्बा में मौजूद विपुल पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री की ओर आकर्षित किया। यहां के पुरातत्व देख वोगल चिल्ला उठे थे चम्बा अचम्भा है। संयोग की बात है कि विद्वान वोगल के समय एक कला पारखी और सूझ बूझ वाला राजा भूरी सिंह राज करता था। दोनों के प्रयास से ही भूरी सिंह संग्रहालय की नींव पड़ी जो भारत के उच्च कोटि के संग्राहालयों में अपना स्थान रखता है। चम्बा को यह सौभाग्य प्राप्त रहा है कि निरन्तर मुस्लिम आक्रमण, पंजाब के मैदानों की भान्ति नहीं हुए जिन्होंने प्राचीन भारतीय सभ्यता के अवशेषों को समाप्त कर दिया। पूर्वकाल के अवशेषों का चम्बा न केवल भण्डार है किन्तु कई विषयों में ये स्वयं प्राचीनता का एक स्मारक है। एक अन्य उल्लेखनीय प्रकाशन डाक्टर हरमन गोइट्ज़ (1955) का पूर्वकाल के चम्बा के काष्ठ के मन्दिर (Early wooden Temples of Chamba) हैं।

चम्बा में विपुल इतिहास सामग्री भारत के प्राचीन राज्यों के इतिहास लेखन के लिये एक मूल रूप की महता रखती है जिसके आधार पर उनका गठन सम्भव है। चम्बा के भूभाग में अगणित लकड़ी के मन्दिर और उन की चित्रकारियां, शिलालेख, ताम्रपत्र, सिक्के, चित्र, मूर्तियां तथा संस्कृत, फारसी, शारदा, टाकरी में लिखी ऐतिहासिक संन्धियां तथा हस्तलिखित ग्रन्थ अपने आप में अनेक पुरातत्व संबन्धी निधियां संजोए हुए हैं। चम्बा के ये प्राचीन अवशेष वर्तमान के साथ असंदिग्ध और अबाधरूप से जुड़ें है जबकि भारत के अन्य भागों में एक राजवंश ने दूसरे को उखाड़ फैंका, नये मत-मतान्तरों, रीति-रिवाजों ने पुराने उखाड़ फैंके। विदेशी आक्रमणों की एक लहर के बाद दूसरी लहर आई और प्राचीन स्मारकों के विनष्ट कर दिया। हिमाच्छादित पर्वतों से घिरे चम्बा में प्राचीन परम्पराएं ओर संस्थाएं बदस्तूर बनी रहीं।

## शिलालेख

श्री जे. एफ. वोगल, अधीक्षक, पुरातत्व निरीक्षण विभाग, उत्तरीय मण्डल ने चम्बा रियास्त के पूर्वकालिक अवशेष (Antiquities of Chamba State) पुस्तक लिखी जिसके द्वारा विद्वानों का ध्यान चम्बा में मौजूद पुरातत्व सम्बन्धी विपुल सामग्री की ओर आकर्ष्जित किया। इस पुस्तक में शिलालेखों, ताम्रपत्रों के चित्रों सहित पूर्ण वर्णन है। ये शिलालेख चम्बा का सम्बद्ध और अधिक विस्तृत इतिहास लिखने में सहायक है। ये अभिलेख पड़ोसी राज्यों के इतिहास पर भी प्रकाश डालते हैं। जहां कम ही उपलब्ध है। भारत का कश्मीर ही एक ऐसा राज्य रहा है जिसके पास हिन्दू काल का लिखित इतिहास विद्यमान है। कल्हण की राजतरंगिणी चम्बा के ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी के शिलालेखों और ताम्रपत्रों को जीवन प्रदान करती है और कश्मीर के महान इतिहास, को ये शिलालेख पुष्ट करते हैं।

इन शिलालेखों में कुछ तो साहित्यिक दृष्टि से प्रसिद्ध है जैसे "सराहन की प्रशष्टि", 'देवी-री-कोठी' और 'मूल किहार'। सराहन प्रशष्टि के दो श्लोक नीचे उद्धृत किये जाते हैं :-

**"जयति शिव एष ईशस्सोमप्रभया विभूषितः शरीर'**
**सततानुरक्त - गौरी दहार्ध-निबद्ध-सद्भावः।।**
**आसीत प्रशस्त-गुण-गौरव-वृत्त-युक्त पर्युल्लस द्विमालिमाकर-रजिशुद्य,**
**श्री भोगटो भुवन-भूषण-भूत-मूर्तिस्सुव्यक्त-मौक्तिक-मणि-प्रीत मपृथिव्याम्।**

साल नदी के पश्चिमी और साहो परगना में सराहन ग्राम में स्थित शिलालेख है जो कि 22 इंच लम्बा, 6 (इंच ऊंचा संस्कृत के 22 श्लोकों में सुरक्षित है। इसमें भगवान शिव को समर्पित मन्दिर का उल्लेख है जो कि भोगट के पुत्र सात्यकि नाम के व्यक्ति ने किश्किन्धा वंश की महिला सोमप्रभा की स्मृति में बनवाया। कविता का अधिक भाग इस महिला की प्रशंसा में लिखा है। सम्भवतः यह स्थानीय राणा वंश के थे। किश्किन्धा हिमगिरि के आस पास के इलाका का प्राचीन नाम था, इस लिए सोमप्रभा वहां के राणा की पुत्री रही होगी। शिला पर वर्णित शिव मन्दिर साहो का चन्द्रशेखर शिवालय है।

अन्य शिलालेख साहित्यिक नहीं किन्तु प्राचीन अक्षर बोध की दृष्टि से इन का बड़ा महत्त्व है क्योंकि ये गुप्तलिपि से शारदा लिपि के चालू होने से लेकर उस समय तक एक अटूट कड़ी बनाते हैं जब गुरुमुखी, टाकरी और अन्य वर्तमान अक्षर-लिपि प्रारम्भ हुए। चम्बा के शिलालेखों द्वारा लोककाल संवत के प्रयोग के कारण काल-गणना में कठिनाई होती है। इन प्राचीन अभिलेखों को चट्टान-लेख, मूर्तिलेख, शिलालेख, काष्ठ-लेख और ताम्र पत्र पटों में बांटा जा सकता है। चट्टान-लेख बहुत प्राचीन हैं किन्तु गिनती में थोड़े हैं। इन्हें स्पष्ट करना भी कठिन है। शिलालेखों पर विचित्र कुरूप चित्र बने होते हैं। ये वहुधा पन्निहारों पर रखे होते हैं। अधिकतर ये शिलालेख राणाओं और ठाकुरों द्वारा बनाए गए हैं। इन पर वरुण देव का चित्र बना रहता है। किन्तु इन के ऐतिहासिक महत्त्व बहुत अधिक है। इसी प्रकार ताम्रपटों का अद्वितीय संग्रह मौजूद है। इनकी संख्या 150 से भी ज्यादा है। ये ब्राह्मणों और मन्दिरों को भूमिदान के सम्बन्ध में है। मुस्लिम राज्य काल से पहले के ताम्रपत्रों का महत्त्व अधिक है। दो ताम्रपत्र ऐसे मिले हैं जो राजा युगाकर वर्मा ने दिये हैं। तीन ताम्रपत्र ग्यारहवीं शताब्दी के हैं। राजतरंगिणी में चम्बा के बारे में जो वर्णन मिलता है, उसकी इन ताम्र-पत्रों से पुष्टि होती है। दो ऐसे राजाओं के नाम इन में पाये जाते हैं। जो वंशावली में नहीं हैं। शिलालेख 14 से भी अधिक प्राप्त हुए हैं। वंशवृक्ष पीढ़ी दर पीढ़ी राजपुरोहितों ने अनेक बार सम्पादन किए प्रतीत होते हैं। ये अपनी सांस्कृतिक धरोहर को भविष्य के लिए अनुसन्धान कर्ताओं के लिये सुरक्षित रखने में समर्थ रही।

अभिलेखों के सम्बन्ध में एक विशिष्टता है, जो सब में समानरूप से पाई जाती है। इन सब के धार्मिक आशय है जो कि अभिलेखों में वर्णित है। मन्दिरों और मूर्तियों का अभिषेक करते समय स्पष्ट तौर पर ब्राह्मणों और मन्दिरों को भूमिदान पुण्यकार्य समझ कर किया है। इस प्रकार स्थानीय इतिहास की विस्तृत रचना में ये सहायक है। कठिनाई सम्वत के विषय में रहती है क्योंकि कई सम्वत प्रचलित थे- लोक सम्वत, शास्त्र सम्वत, जिस का 2700 वर्षो का चक्र है और हर शताब्दी एक नक्षत्र के नाम पर है, सप्तर्षिकाल, पहाड़ी सम्वत, कच्छ सम्वत।

लोक-काल :- ग्यारहवीं शताब्दी से शिलालेखों, ताम्रपत्रों पर लोक-काल जिसे सप्तर्षि काल भी कहा है प्रयोग प्रचलित रहा है। सप्तर्षि काल का प्रयोग कल्हण ने राजतरंगिणी में किया है। चम्बा के शिलालेखों पर इस सम्वत को शास्त्र या शास्त्रीय संवत्सर नाम दिया गया है। इसका प्रयोग पंजाब के पहाड़ी राज्यों में हुआ है। इसीलिये इसे पहाड़ी सम्वत या कच्चा सम्वत भी कहा है। इस में शताब्दी की संख्या छोड़ दी गई है। सप्तर्षि सम्वत और शाका सम्वत चैत्र मास की वर्ष प्रति पदा से आरम्भ होता है। मुस्लिम राज्य स्थापना से पहिले चम्बा के शिलालेखों में विक्रम या शाका सम्वत का प्रयोग सप्तर्षि सम्वत के साथ, एक दो स्थानों के अतिरिक्त नहीं हुआ है। किन्तु शास्त्र सम्वत और कलियुग सम्वत साथ-साथ प्रयुक्त हुए हैं।

चम्बा नगर में एक शिलालेख पर इस प्रकार लिखा है :-

विक्रम सं. 1717, शक सं. 1582, शास्त्र सं. 36, वैशाखदी 13, मेष संक्रान्ति। चम्बा में मूर्तियां पर लेख आठवीं शताब्दी के प्रारम्भ से हैं। यहां बहुसंख्या में ताम्रपत्रों का पाया जाना

सारे भारतवर्ष में अद्वितीय है। इनका इतिहासिक महत्त्व इसमें है कि हर एक में उसके देने वाले राजा का, उसके पिता और माता का नाम उल्लिखित है, कहीं कहीं पूर्वजों का और दान लेने वाले का नाम और स्थान भी।

पनघटों पर वरुण और देवी देवताओं की प्रतिमायें और अभिलेख स्थापित करने की विशेष परम्परा थी। चुराह और पांगी में शिलालेख बहुत है। इन पर शास्त्र या सप्तर्षि या लोकपाल सम्वत अंकित है। पाडर सीमा के पास लुज में राजा जष्ट के नाम के पन्हिहार पर शिलालेख ई. 1105-06 का विद्यमान था साल्ही में ललित वर्मा के नाम के शिलालेख ई. 1170 का पाया गया है।

साल्ही पन्हिहार का शिलालेख बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह विशालकाय शिलालेख साढ़े 6 फुट ऊंचा ओर सात फुट चौड़ा है। इसके केन्द्र में शिव की मूर्ति अंकित है जिसके दाहिनी ओर वरुण और गणेश की मूर्तियां है। और बाई ओर इन्द्र और कार्तिकेय की मूर्तियां बनी है। आठ नदियां सिन्धु, जेहल्म, चन्द्र भागा, रावी, व्यास, सतलुज, यमुना, गंगा अंकित हैं और विष्णु निद्रावस्था में मुद्रित है। शिलालेख पर कलियुग सम्वत 4270 अंकित है। सम्वतों की दृष्टि से यह अति महत्त्वपूर्ण है।

चुराह के पन्हिहार शिलालेखों में सई का स्थान विशिष्ट है। दो शिलालेखों में जो चित्र है उन में ऊपर की कितार पर देवी देवताओं के चित्र हैं और नीचे की कितार में मानव आकृति है जो शायद उसकी है जिसके लिये यह शिला बनवाई। पुरुष का नाम रणोत्तर फाही दिया है, और स्त्रोका चित्र-सम्भवतः उस की पत्नी का है। अंकित है कि इन्होंने मार्ग निर्माण का पुण्य कार्य किया। ऐतिहासिक दृष्टि से इसके दिलचस्प पक्ष यह है कि इस पर कलियुग सम्वत 4270 (ई. 1168-69) अंकित है और कि कलियुग के 4277 30 वर्ष शेष हैं।

देवी कोठी पन्हिहार शिलालेख व मूल किहार की पन्हिहार शिला, यद्यपि ये शिलाएं टूटी फूटी हालत में है किन्तु साहित्यिक और ऐतिहासिक दृष्टि से ये शिलाएं अमूल्य हैं। प्रशष्टि संस्कृत की उत्कृष्ट कविता में है। शिलालेख पर कवि का नाम कमल लछण राजगुरु दिया है। इस पर शास्त्र संवॆत दिया है। यह शिलाएं राजा ललित वर्मा के समय की हैं जिस ने नागपाल को राजांक की उपाधि दी है। मूल किहार शिला पर उत्कृष्ट संस्कृत श्लोकों में स्थानीय राणा की वंशावली और वह हालात जिन में वह जलाशयबना, वर्णन किये हैं। पहला नाम गया पाल ठाकुर का है जिसका राजतरंगिणी में भी भिक्षाचार की सेना के सेनापति के तौर पर वर्णन है। वह हर्ष का पोता था और कश्मीर की राजगद्दी पर बिठाया था उस का (गयापाल) का गोत्र कश्यप था।

**ताम्र-पत्र**

कहा जाता है कि भारत के बहुत से भागों में ताम्रपत्र पाए गए हैं। ताम्र-पत्र पर दान-पुण्य को अंकित कर देने का रिवाज था। चीनी यात्री फाह्यान ने इस बात का वर्णन किया है। इसका तात्पर्य यह है कि पांचवीं शताब्दी अथवा उस से पहले भी ताम्र-पत्र पाए जाते थे। यह वर्णन मिलता है कि तीसरे बौद्ध सम्मेलन के बाद धार्मिक शास्त्रो पर लिख कर उन्हें कनिष्क

काल में Stupa में दवा दिया गया। तक्षशिला में ताँबे, चांदी, सोने के पत्र पाए गए। चम्बा में इस प्रकार के 150 पट्टे प्राप्त हुए हैं। एक के सिवाय उन सभी पर भूमिदान अंकित है। एक ताम्र-पत्र पर चम्बा के राजा राजसिंह और कांगड़ा के राजा संसार चन्द के बीच हुई सन्धि को अंकित किया है।

देवताओं के प्रति दान के तीन पत्र उपलब्ध हैं; सबसे प्राचीन में भरमौर के नरसिंह मन्दिर को, दूसरे में चम्बा के एक अन्य मन्दिर को और तीसरे में पांगी में मिंधल के चामुण्डा मन्दिर को भूमिदान का उल्लेख है। ब्राह्मणों के प्रतिदान के अतिरिक्त उन्हें भूमि भी दी जाती थी जिन्होंने राजा की विशेष सेवा की हो। ब्राह्मणों को भूमिदान सदा के लिये होती थी और अब्राह्मणों के लिये उनके जीवन काल तक चम्बा की यह विशेषता रही है कि हजार वर्ष पहले किया दान आज भी उन की सन्तति भोग रही है। राजा साहिल वर्मा के पौत्र क्दिग्ध वर्मा द्वारा सुंगल (सुमनगला) का भूमिदान ताम्र-पत्र एक ऐसा उदाहरण है। सूर्य ग्रहण ओर मकर संक्रान्ति को पुण्य लाभ के लिये दिये भूमिदान अधिक हैं। तीन प्रतिष्ठित परिवार-राजगुरु, राजपुरोहित और राज ज्योतिषी दान के मुख्य पात्र समझे जाते थे। मुस्लिम काल में जो ब्राह्मण गंगा में अस्थि प्रवाह के लिये जाता था, वह भी भूमिदान का अधिकारी होता था।

1080 ईसवीं से 1330 तक के काल में जारी किये गए ताम्र-पत्र उपलब्ध नहीं, अथवा जारी नहीं हुए। इन ताम्र-पत्रों का महत्त्व इस बात में भी है कि दानी राजा, उसके पिता और माता का नाम उल्लिखित है। इन प्राचीन अवशेषों की विशेषता है कि वर्तमान प्राचीन के साथ अटूट रूप से जुड़ा है। भारत के अन्य बहुत से भागों में स्मृति मात्र भी नहीं है।

चम्बा नगर के एक शिलालेख पर काल इस प्रकार अंकित हैः- विक्रम सम्वत 1717, शक संवत 1582, शास्त्र सं. 36, वैशाख दी 13, मेष संक्रान्ति - (तदनुसार (28 मार्च, 1660)

## अध्याय 5

# चम्बा का राजनैतिक इतिहास

चम्बा रियास्त के इतिहास के काल निर्णय में वंशावली, शिलालेख, ताम्र-पत्र और अन्य अभिलेख बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं, ये अभिलेख पड़ोसी राज्यों के इतिहास पर भी प्रकाश डालते हैं क्योंकि वहां इस प्रकार के अभिलेख बहुत कम मात्रा में हैं। कश्मीर का लिखित इतिहास कल्हण की रजतरंणिगी ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी के अभिलेखों ओर ताम्रपत्रों में जान डाल देती है और कश्मीर के उस महान इतिहास की विश्वसनीयता को स्थापित कर देती है। चम्बा के ये प्राचीन अवशेष वर्तमान के साथ असंदिग्ध और अबाध रूप से जुड़े हैं क्योंकि चम्बा अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण आक्रमण की आपदाओं से बचा रहा है।

चम्बा राज्य की नींव ई. 550 में डाली गई थी, इस प्रकार यह भारत के प्राचीन राज्यों में है। इस का अधिकृत इतिहास वंशावली द्वारा प्राप्त है जिस में राजाओं के नाम और अन्य ऐतिहासिक सामग्री मौजूद है। शिलेखों, अभिलेखों और ताम्र-पत्र पट्टों के द्वारा इन की पुष्टि होती है। हमारे पास ऐसे साधन नहीं है जिन से यह पता चल सके कि पहाड़ों के मौलिक आदि वासी कौन थे। पुराणों से कुछ झलक मिलती है। आम धारणा यह है कि बहुत से लोग मैदानों से आ कर यहां बसे। एक कहावत प्रचलित है-उजड़या लाहौर बसया भरमौर। हो सकता है कि हाली, सिप्पी आदि जातियां प्राचीनतम वासी रहे हों क्योंकि एक अन्य कहा है :- चनाल जेठा, राठी कनेठा। यह भी परम्परा रही है कि कोई भी महत्वपूर्ण कार्य सब वर्गों, जातियों के शामिल हुए बिना सम्पन्न नहीं होता था। जन्म, मृत्यु, विवाह कार्यों पर इन सब की सहायता अनिवार्य है। यही समझा जाता है कि चम्बा राज्य की आबादी बहुत पुरानी है। राज्य की बहुसंख्या आबादी राठी थी, जिन का धन्धा खेती-कृषि और गौ पालन था। इन के अतिरिक्त ब्राह्मण, राजपूत मुख्य रूप से हैं। इनके बारे में विश्वास है कि ये मैदानों से आकर बसे। अन्य सब जातियां कामगार, अपने अपने व्यवसाय-पेशे के नाम पर है। जनश्रुति है कि राजा अजेय वर्मा - A.D. 780-800 के काल में ब्राह्मण दिल्ली से भरमौर आकर बसे। इसी प्रकार खत्री, राजपूत भी भिन्न भिन्न काल में भिन्न भिन्न स्थानों से आ कर बसे जो मुस्लिम आक्रमणों के उत्पीड़न से बचने के लिये पहाड़ों में आ गए। भरमौर का एक नाम गद्देरन है, इसलिये यहां के वासियों को गद्दी कहते हैं। स्वतन्त्र भारत में इसे जनजाति करार दिया है। राठी आबादी की रीढ़ की हड्डी है।

ठाकुरी काल :- हिमालय के अधिकतर उत्तर-पश्चिमी भाग पर छोटे-छोटे मुखिया जिन्हें ठाकुर या राणा कहते थे, में बंटा हुआ था। ये सीमा विस्तार के लिये आपस में लड़ते रहते थे। जहां इन का आधिपत्य होता था, उसे ठाकुरी, ठकुराई या रणौत कहते थे। राणा से रनूह कहलाया। इस प्रकार आज की रणूह कोठा मौजूद है। प्राचीन काल में ये रनूह या रणोत पद्धति ही शासन की अत्यन्त छोटी व्यवस्था थी। बाद में इन्हीं राणाओं के परास्त कर और रणौतों को मिला कर बड़ी रियास्त चम्बा बनी। उलांसा, गरोला, सवाई, रणूह कोठी के

राणा थे। कहावत के अनुसार राजा मूसवर्मा ने कुल्लू से वापसी पर उलांसा, गरोला, सवाई की जागीर दी। तीनों के पूर्वज एक ही हैं। गूं के लेख में मुख्य सामन्त अशद के नाम के उल्लेख है। चम्बा नगर के पास बन्नू में भी इस प्रकार एक राणा का आधिपत्य था। कहावत है:- रहला राणा, वहला रानी, बनू कोट, सरौल पाणी, भद्रम झिंझन खाणी। खड़ोठी की जागीर भी राणाओं की थी। सराहण प्रशष्ति में एक राणा की कथा अंकित है। अपनी सीमा की सुरक्षा के लिये, अपनी रिहायश के लिये और अपने छोटे से इलाका की व्यवस्था के लिये राणा एक भवन का निर्माण करता था जिसे कोट कहते थे। इन्हीं कोटों ने बाद में कामदार कोठी का नाम ले लिया। चम्बा में हर परगना में यह कोठी मौजूद है जो अब पंचायत घर बन गए हैं। ये रणोत बहुधा नदी नालों, पहाड़ों की सीमा से घिर होते थे। इस प्रकार के रणोत रावी के ऊपरी भाग अर्थात भरमौर और चम्बा तहसील (बजारत) में बहुत पुराने हैं। चुराह, पांगी, लाहौल में भी स्थान स्थान पर रणौतें थी। अनेक शिलालेख और प्रशस्तियां मिली हैं। जिन का निर्माण ज्यादातर इन राणाओं ने किया है। राजा मेरु वर्मा ने भरमौर ओर रावी के साथ साथ जो रणौते थीं उन्हें परास्त कर चम्बा राज्य का विस्तार किया। इन राणाओं को अपने अधीन सामन्त या जागीरदार के रूप में रखा। मेरु वर्मा के पश्चात राजा साहिल वर्मा, जिन्होंने नगर की स्थापना की, ने राज्य विस्तार करते हुए शेष राणाओं को समाप्त किया। कई राणाओं को चम्बा के राजाओं ने राजन्यक की उपाधि दी है, ऐसा वर्णन शिलालेखों में मिलता है। चुराह व जारत (अब तहसील) के तीन स्थानों सई कोठी, देवी कोठी, मूल किहार के शिलालेखों में जो कि ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी के हैं, इस प्रकार राणाओं का वर्णन है जिस से वहां की रणौती पद्धति का पता चलता है। चुराह में भन्नोता, सई, लोह टिकरी देवी कोठी रणौतें थी। इन की आपस में लड़ाइयां चलती रहती थी। किसी समय किश्तवाड़, भदरवाह, पाडर की रणौतें चम्बा रियास्त का भाग रही है। अब ये जम्मू-कश्मीर का भाग हैं। चम्बा-लाहौल की रणौत के ठाकुर वर्तमान काल तक रहे हैं और छोटे राजा के तौर पर माने जाते थे, अन्य जागीरदारों की भान्ति भारत की स्वतन्त्रता के बाद ही यह ठकुरायण समाप्त हुई।

लाहौल में टिंडी, किशोर, हिंसा, भ्याड़, शोर, पुरथी आदि परगना शामिल हैं। यहां का राणा त्रिलोकनाम के मन्दिर की स्थापना से पहले जम्मू से आए। इन का एक पूर्वज हमीर बरधाई था। जिस की वीरता के गीत स्थानीय बोली में गाए जाते हैं। उसने कुल्लू राजा का आक्रमण परास्त किया। बाद में उसके विरोधी ने खाने पर बुलाकर धोखे से मार दिया।

अब भी सारे जिला में विशेषतया चम्बा, भरमौर, चुराह में राणाओं के वंशज पाए जाते हैं। राणा एक जाति वाचक नाम बन गया है। राणाओं को विशेष अधिकार प्राप्त थे, उन्हें बेगार या कोई राजसेवा नहीं देनी पड़ती थी। त्रिलोकी नाथ-लाहौल के राणा को गद्दी बैठने पर राजभक्ति के रूप में चम्बा आ कर राजा को भेंट देनी होनी थी। जिस में लाहौली टट्टू भी शामिल थे।

एक उल्लेख आता है कि कन्नोज के शासक रणदेव राठौर ने कुमाऊं पर आक्रमण किया और विजय प्राप्त की। तत्पश्चात शिवालिक की पहाड़ियों से होकर जम्मू के बाहु जिला

तक राज्य विस्तार कर लिया, इस प्रकार 500 छोटे-छोटे रजवाड़ों को जीता। इस से इन राणाओं, ठाकुरों का काल समाप्त हो कर राजपूत राजाओं के राज्य स्थापित हुए। जो आधुनिक काल तक रहे हैं। कांगड़ा के चन्द्रवंशी और राजस्थान के सूर्यवंशी राजाओं केराजस्थान के राजपरिवारों के साथ सम्बन्ध रहे हैं। यही कारण है कि राजस्थानी भाषा का प्रभाव पहाड़ी बोलियों पर रहा है।

राजतरंगिणी में वर्णन है कि कश्मीर के राजा अनन्तदेव ने (1028 से 1063 ई.) चम्बा पर आक्रमण किया ओर राजा साल को खदेड़ दिया। चम्बा में तीन ताम्रपत्रों के मिलने पर यह निश्चित हो सका कि वह राजा शालवाहन था। वंशावली में इस का नाम नहीं है, उस का बड़ा लड़का सोमवर्मन था। इसके छोटे पुत्र अष्टवर्मन का भी वर्णन है। वंशावली में इनके नाम नहीं हैं। राजा अनन्तदेव ने अपने पुत्र के हक में 1063 में गद्दी छोड़ी। आक्रमण इसके पूर्व ही हो सकता है। प्राचीनतम ताम्रपत्र में वर्णन है कि सोमनाथ वर्मन पुत्र शालिवाहन वर्मन ने भादों मास में सूर्य ग्रहण के अवसर पर भूमिदान किया। इस ताम्रपत्र पर राजा सोमवर्मन ने स्वयं हस्ताक्षर किये हैं। राजा अनन्तदेव के आक्रमण और राजा सोमदेव के गद्दी पर बैठने के समय 1050 से 1060 ई. के बीच का हो सकता है। तब से 1870 ई0 तक जब राजा श्री सिंह की मृत्यु हुई क्रम में 37 राजा हुए। अर्थात 810 वर्ष की इस अवधि में एक राजा के राज्यकाल का मध्यमान 22 वर्ष बैठता है। वंशावली के अनुसार मारु वर्मन से लेकर शालिवाहन तक 27 राजा हुए। 1540 से 1060 ई. तक प्राचीन राजधानी भरमौर अर्थात् ब्रह्मपुर रही। पुरातत्व और शिलालेख अवशेष अब भी वहां विद्यमान हैं जो इन परिणामों की पुष्टि करते हैं। भरमौर में पीतल के तीन अभिलेख और छतराड़ी में एक अभिलेख है। एक अभिलेख तो मनीमहेश मन्दिर के सामने स्थित पीतल के नन्दी के आधार पर है। कहते हैं कि इस का निर्माण राजा मेरु वर्मा ने किया। मेरुवर्मा राजा मारुवर्मा से क्रम में आंठवा राजा था। अन्य का अभिलेख भरमौर में लक्षणा देवी और गणेश की मूर्तियों के आधार पर हैं। इसी प्रकार छतराड़ी में भी अभिलेख शक्ति देवी की मूर्ति के आधार पर है। इन के निर्माण का श्रेय भी मेरु वर्मा को है। ये अभिलेख लोककथा की पुष्टि करते हैं। राजा मेरुवर्मा ने लक्षणा देवी और गणेश मूर्तियों के अभिलेखों पर तीन पीढ़ियों तक अपने पिता दिवाकर वर्मा, दादा बालवर्मन पड़दादा आदित्य वर्मन के नाम अंकित किए हैं। भूषण वर्मन का वर्णन अपने वंश के आदि पुरुष के तौर पर है। वंशावली में आदित्य वर्मन का नाम आदिवर्मन और दिवाकर वर्मन का नाम देववर्मन के रूप में है। इनका राज्य काल सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रहा होगा। इन अभिलेखों को एक ही कलाकार गुग्गा ने बनाया था। आधुनिक राजधानी चम्बा की नींव का काल निश्चित करने में भी इन अभिलेखों से सहायता मिलती है। चम्बा की स्थापना राजा साहिल वर्मा ने की जो मारु वर्मा से बीसवां राजा क्रम में हुए है। यह अनुमान है कि राजा साहिल वर्मा का राज्यकाल 920 ई. से 940 ई. रहा। लगभग 930 ई. में ब्रह्मपुर (भरमौर) से राजधानी चम्बा लाई गई। साहिल वर्मा के पुत्र युगाकर वर्मा, उस के पुत्र विद्ग्ध वर्मा ओर गद्दी से उतरे शालिवाहन के पुत्र सोमवर्मन और अष्टवर्मन अपने पिता के बाद क्रम से गद्दी

पर बैठे। राजतरंगिणी में भी इस की पुष्टि होती है। जप्टवर्मन 1087-88 ई. में कश्मीर गए। उनके पुत्र अप्टवर्मन 1101 ई. में और उनके पुत्र राजा उदय वर्मन 1122 ई. में कश्मीर गए। सम्भवतः उस समय यह राज्य कश्मीर के अधीन रहा हो। उदय वर्मा का नाम वंशावली में नहीं है।

चम्बा के राजा सूर्यवंशी क्षत्री थे। उन की वंशावली सूर्य या नारायण से प्रारम्भ होती है। ऐसा विश्वास है कि मारु वर्मन गंगा की एक उपत्यका कल्पा में निवास करते थे, ब्रह्मपुर अथवा भरमौर राज्य का प्रथम ऐतिहासिक वर्णन मारु नामक राजा से प्राम्भ होता है। उन्होंने प्रारम्भिक जीवन तपस्या में व्यतीत किया। बाद में विवाह किया और तीन पुत्रों का जन्म हुआ। जब वह बड़े हुए तो तीनों को अलग अलग राज्य दे कर बसा दिया। सबसे बड़े लड़के को पूर्वजों के स्थान पर ही छोड़ा। दो पुत्रों को साथ लेकर पंजाब आ गए। मंझले लड़के को कश्मीर के समीप की घाटी में बसा दिया और सब से छोटे लड़के जयस्तम्भ को लेकर ऊपरी रावी घाटी में आए। मारु वर्मा ने यहां विद्यमान छोटे मोटे राणाओं को जीत कर ब्रह्मपुर (वर्तमान भरमौर) की नींव डाली। और अपनी राजधानी बना कर एक नये राज्य को स्थापित किया। ब्रह्मपुर का नाम ब्रह्माणी देवी के नाम पर पड़ा। यह मन्दिर ब्रह्मपुर से दो किलोमीटर पर है। नया राज्य स्थापित करने की घटना छटी शताब्दी की है। छोटे लड़के जयस्तम्भ को बाद में राज्य सौंप कर स्वयं पूर्वजों के राज्य काल्पा चले गए। पहिले यह छोटा सा राज्य था, जिस में वर्तमान भरमौर तहसील और छतराड़ी तक का इलाका शामिल था। मारु के पश्चात कई राजा हुए जिनके केवल नाम ही मालूम हैं। जयस्तम्भ, जलस्तम्भ और महास्तम्भ। जनश्रुति के अनुसार मारु बड़े तपस्वी ओर सत्यप्रेमी साधुवृत्ति के राजा थे।

आदित्य वर्मन का काल 620 ई. है। इन का नाम वंशावली और भरमौर के अभिलेखों में मिलता है जो राजा मेरुवर्मन ने खुदवाए थे। आदित्य वर्मन पहिले राजा हुए जिन्होनें अपने नाम के साथ वर्मन प्रयोग किया। आदित्य वर्मन मेरुवर्मन के प्रपिता महा थे। कुल्लू के इतिहास में उल्लेख है कि कुल्लू का राजा ब्रह्मोपाल निस्सन्तान मर गया। चम्बा, लद्दाख, सुकेत, बशहर, कांगड़ा, बंधाल के राजाओं ने मिल कर गणेश पाल को उत्तराधिकारी बना दिया। इस से यह प्रतीत होता है कि भरमौर राज्य की गणना शक्तिशाली पहाड़ी राज्यों में थी।

बाल वर्मन - 640 ई. इन का वंशावली में नाम नहीं हैं, किन्तु भरमौर के दो अभिलेखों में इन का नाम लिखा है। यह मेरुवर्मा के दादा थे।

दिवाकर वर्मा - 660 ई. इन का वंशावली में देववर्मा नाम लिखित है, भरमौर के अभिलेखों में दिवाकर वर्मा अंकित है। यह मेरुवर्मा के पिता थे।

मेरु वर्मा - 680 ई. ब्रह्मपुर के पूर्ववर्ती राजाओं में यह बहुत प्रसिद्ध है। इन्होंने अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार किया। छतराड़ी में शत्रुओं पर विजय के उपलक्ष में शक्तिदेवी की मूर्ति को समर्पित किया, जिसे उसके सामन्त राणा अशाध ने बनवाया था। इससे इस बात की पुष्टि होती है। कि मेरु वर्मा ने अपने राज्य का विस्तार चम्बा तक कर लिया था। कुल्लू के इतिहास में वर्णन है कि वहां के राजा दत्तेश्वर पाल के साथ ब्रह्मपुर के राजा का युद्ध हुआ।

ब्रह्मपुर (चम्बा) के राजा अमर द्वार कुल्लू अधिपति मारा गया। यह अमर शायद मेरु वर्मा ही रहे होगें। कुल्लू के इतिहास में यह भी उल्लेख है कि वहां का राजा अमर पाल अपने सारे पुत्रों के साथ ब्रह्मपुर के राजा के आक्रमण में मारा गया। केवल एक ही पुत्र बच सका जिस का नाम सीतलपाल था। सीतलपाल के पांच उत्तराधिकारी भी कभी राज नही कर सेके। इस से ज्ञात होता है कि कुल्लू का राज्य लम्बे समय तक ब्रह्मपुर के अधीन रहा है।

मेरुवर्मा एक वीर योद्धा थे और कला पारखी भी। उन्होंने कई मन्दिर बनवाए, अभिलेख अंकित किये। आज तक उनके कई अवशेष भरमौर में मिलते हैं। इन से यह ज्ञात होता है कि उस काल में भी राज्य में धन, वैभव और साधन मौजूद थे। लोग कला प्रेमी ओर धार्मिक थे। चिरकाल तक उन मन्दिर, मूर्तियों और शिलाओं पर वायु-वर्षा का प्रभाव नहीं हुआ। आज तक वे बड़ी अच्छी स्थिति में हैं। उस समय के बने मन्दिर-मनीमहेश, लक्षणा देवी, गणेश, नरसिंह अति प्रसिद्ध हैं और अपनी भव्य कला के लिये उन की गणना चोटी की मूतियों और मन्दिरों में होती है। मनीमहेश मन्दिर शिखर शैली का है। मन्दिर में एक विशाल शिवलिंग हैं। मनीमहेश के मन्दिर के सामने पीतल के पूरे कद की नन्दी की मूर्ति है जिसके आधार पर एक बड़ा अभिलेख अंकित है। उसमें नरसिंह की मूर्ति के अतिरिक्त सब मन्दिरों को मेरुवर्मन को समर्पित किया है। सूर्य का मन्दिर भी मेरुवर्मा द्वारा निर्मित है। चम्बा से जब भी कोई राजा भरमौर जाता था तो उसे पहले सूर्य मन्दिर के दर्शनों को जाना पड़ता था तभी वह अपने निवास स्थान को जा सकता था। मेरु वर्मा के बाद कई राजाओं के नाम क्रमशः इस प्रकार है :- मन्दार वर्मन, कन्तार वर्मन, प्रगल्भ वर्मन ।

अजय वर्मन :- 760 ई. गद्दी ब्राह्मणों और राजपूतों का कहना है कि वे इस राजा के काल में दिल्ली से आए। कहा जाता है कि इस राजा ने युवराज को शासन की शिक्षा दी और राजगद्दी पर बिठा दिया। तत्पश्चात स्वयं खड़ामुख के स्थान पर शिवजी की तपस्या में शेष आयु व्यतीत कर दी। सुवर्ण वर्मन, राजपुत्र 780 ई. में राजगद्दी पर बैठा।

लक्ष्मीवर्मन :- 800 ई. इस राजा के सिहांसन पर बैठने के थोड़े समय पश्चात् राज्य में एक महामारी का प्रकोप हुआ। बड़ी संख्या में लोग मर गए। राज्य की जनसंख्या बहुत कम रह जाने के कारण इस अवस्था का लाभ उठा कर "किर" नाम की एक जाति ने राज्य पर आधिपत्य कर लिया। बृहत् संहिता में किरों को कश्मीर वासी बतलाया है किन्तु अलग जाति के तौर पर सर औरलस्टीन (Sir Aural Stein) का कथन है कि कश्मीर के उत्तर पूर्वीय क्षेत्र में रहने वाली जाति कीर कहलाती थी, इसलिये ये तिब्बती या यारकन्दी भी हो सकते हैं। चम्बा के लोगों का विश्वास है कि इन्हीं लोगों ने बैजनाथ पर भी आक्रमण किया था, और वहां अपना आधिपत्य स्थापित किया। बैजनाथ को उन दिनों किर ग्राम कहते थे। मेरुवर्मन के समय से कुल्लू ब्रह्मपुर के अधीन रहा किन्तु लक्ष्मी वर्मन की मृत्यु के पश्चात् वह स्वतन्त्र हो गया।

मूश वर्मन :- 820 ई. लक्ष्मीवर्मन निस्सन्तान मर गया किन्तु उस की रानी मृत्यु के समय गर्भवती थी। किंवदन्ती है कि राजा की मृत्यु और पराजय पर मंत्री और राजपुरोहित

रानी को पालकी में डाल कर कांगड़ा की ओर ले गए। दयोल से थोड़ी दूर घरोह ग्राम (त्रेहटा) में रानी को प्रसूता पीड़ा होने लगी। रानी ने कहारों को पालकी रोकने के लिये कहा। वहां वह समीप की एक गुफा में चली गई और वहां पुत्र को जन्म दिया। इस विचार से कि नव-जात शिशु शत्रु के हाथ न पड़ने पाये, वहीं मृत्यु को प्राप्त कर ले, रानी वापस आ कर पालकी में चल पड़ी। मंत्री और राजपुरोहित को सन्देह हो गया। पूछने पर रानी ने स्वीकार कर लिया कि उसने पुत्र को जन्म दिया है। वे गुफा में गए तो देखा कि नव-जात शिशु को चुहों ने उसकी रक्षा के लिये चारों ओर से घेर रखा है। इस कारण उस का नाम मूष वर्मन पड़ा। जिस शिला पर राजकुमार को रखा अब भी उसे दिखाया जाता है। बच्चे को लेकर यह दल आगे कांगड़ा की ओर बढ़ा। यहां रानी ने एक ब्राह्मण के घर शरण ली और उसे अपना गुरु बनाया । बिना परिचय दिये वह 8-9 वर्ष तक वहां रही। एक दिन की बात है कि फर्श पर बिखरे आटे पर राजकुमार के पांव के चिन्ह पडे। ब्राह्मण ने देखा कि यह तो किसी राजकुमार के पद-चिन्ह हैं। रानी से पूछा तो उसने भेद खोल दिया। कि उस का सम्बन्ध ब्रह्मपुर के राजघराने से है। इस पर ब्राह्मण रानी और राजकुमार को सुकेत के राजा के पास ले गया। राजा ने सहानुभूति पूर्वक उन का पालन पोषण किया। राजकुमार को अच्छी प्रकार से शिक्षा दी। राजकुमार समझदार था। राजा ने अपनी लड़की का विवाह उस के साथ कर दिया और एक बड़ी जागीर और अन्य उपहार दिये, सेना दी। उस की सहायता से मूष वर्मा ने ब्रह्मपुर से आक्रमण कारियों को खदेड़ दिया और पुनः अपने राज्य पर अधिकार कर लिया। इसके बाद का कोई वृतान्त नहीं मिलता है। राजघरानें में चूहों का मारना बन्द कर दिया गया। राजा मूष वर्मा के पश्चात निम्न राजाओं ने क्रमशः राज्य किया :- हंस वर्मा, सार वर्मा, सेन वर्मा, सज्जन वर्मा, मृत्युंजय वर्मा, साहिल वर्मा।

साहिल वर्मा :- 920 ई. राजा साहिल वर्मा ने ब्रह्मपुर से अपनी राजधानी चम्पा जो आज चम्बा कहलाता है, में स्थापित की। राज्यकाल के प्रारम्भ में ही राजा का कुल्लू के राजा के साथ युद्ध चल पड़ा जो बारह वर्षो तक रहा। अन्त में कुल्लू राजा के साथ सन्धि हो गई। उन दिनों ब्रह्मपुर में 84 सिद्ध योगी आए, वह राजा के आतिथ्य और धार्मिक वृत्ति से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने राजा के दस पुत्रों का वरदान दिया। समयानुसार राजा के घर दस पुत्रों और पुत्री का जन्म हुआ। पुत्री का नाम चम्पा रखा गया। इन दिनों राजा साहिल वर्मा ने अपने राज्य का विस्तार करने की यात्रा आरम्भ की थी। रावी घाटी के निचले भाग के समस्त ाणाओं को उस ने अपने आधीन कर लिया। इस यात्रा पर एक योगी चर पटनाथ उनके ाथ रहते थे और साथ में रानी और लड़की थी। जब राजा और उनका लावलशकर इस स्थान र पहुंचा तो चम्पा को यह समतल भूमि बहुत पसन्द आई और यहीं पर ठहरने, राजधानी नाने का सुझाव रखा। यह स्थान एक राणा के अधिकार में था जिसने कणवान ब्राह्मणों के क वंश को दान दे रखा था। अन्ततः राजा और ब्राह्मण कुल में एक सन्धि हुई जिसमें तय आ कि इस कुल के वंशजों का सदा के लिये चम्बा में होने वाले प्रत्येक विवाह के अवसर र आठ चकली (चम्बा का तांबे का सिक्का) ज़मीन के उपलक्ष में मिला करेगा। यह रिवाज

वर्तमान समय तक चलता रहा। राजकुमारी चम्पा के नाम पर इस नगर और राजधानी की नींव पड़ी। एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार इस स्थान पर चम्पा फूल के अनेक वृक्ष थे, इसलिए इस स्थान का नाम पहले ही चम्पा प्रचलित था।

चम्बा के सूई मन्दिर और सूई मेला के सम्बन्ध में एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है। चम्बा में अच्छे पीने के पानी की बड़ी कमी थी। कहते हैं एक रात राजा को स्वप्न आया कि यदि उसका पुत्र अथवा रानी अपनी बलि कूहल के निकास स्थान पर दें तो नगर में पानी आ जाएगा। तदनुसार सूई रानी को ग्राम बजोटा में ले जाया गया। रानी उस स्थान पर समाधिस्थ हो गई और आत्मबलिदान किया । कहते हैं कि तुरन्त कूहल द्वारा पानी आना आरम्भ हो गया। रानी के बलिदान का स्मारक चम्बा नगर के ऊपर सूई मन्दिर के रूप में बन गया। उसकी स्मृति में 15 चैत्र से मासान्त तक हर वर्ष महिलाओं का मेला लगता है। इसे सूई मेला कहते हैं, महिलाएं रानी की स्तुति में गीत गाती हैं।

राजा साहिल वर्मा के पुत्र और उत्तराधिकारी ने अपने राज्य काल में ताम्रपत्र पर अपनी माता का नाम नैना देवी लिखा है। सूई मन्दिर तक राजा अजीत सिंह के समय में सीढ़ियां बनवाई गईं। मेला के अन्तिम तीन दिन राजा द्वारा एक बड़ा भोज दिया जाता था।

इसी प्रकार राजकुमारी चम्पावती की स्मृति के उपलक्ष में नगर मध्य में मन्दिर बनवाया गया जो आजकल चम्पावती मन्दिर जाना जाता है। इसे राजकुल का मन्दिर माना जाता है। प्राचीन काल में प्रथम बैशाख से 21 बैशाख तक मेला लगता रहा है। राजा साहिल वर्मा ने चन्द्र गुप्त और कामेश्वर के दो मन्दिर बनवाये। किंवदन्ती है कि राजा को रावी और साल नदी के संगम पर दो मूर्तियां स्नान करते मिलीं। अपने गुरु चरपट नाथ की देखरेख में ये मन्दिर बनवाकर मूर्तियां स्थापित कर दीं।

लक्ष्मी नारायण मन्दिर के विषय में भी यूं कहा जाता है कि विष्णु मन्दिर बनाने की इच्छा से राजा ने अपने नौ पुत्र विन्ध्या पर्वत से संगमरमर लाने के लिये भेजे। पत्थर लाने में तो वह सफल हुए किन्तु जब पत्थर का तराशना प्रारम्भ किया तो उसमें से मेंडक निकल आया इस लिये उसे नाकारा जान दूसरी बार राजकुमारों को भेजा। दुर्भाग्यवश राजकुमारों का डाकुओं ने वध कर दिया। फिर ज्येष्ठतम राजकुमार को कुछ सन्यसियों, गुसाइयों की सहायता से भेजा। इस बार वह डाकुओं को मारने में सफल हुए। उसके द्वारा लाए गए संगमरमर के पत्थर से विष्णु (लक्ष्मी नारायण) की मूर्ति बनाई गई। जो पहला पत्थर था, उससे त्रिमुखी शिव की मूर्ति, गणपति की मूर्ति और एक लक्ष्मी की मूर्ति बनाई गई।

मूल राजप्रसाद का निर्माण भी राजा साहिल वर्मा ने किया मन्दिरों के प्रबन्ध के लिये उनको भूमिदान दी। योगीचरपटनाथ के परामर्श से नई राजधानी बसाने का कार्य सम्पन्न हुआ, इसलिये योगी के सम्मान में एक योग्य समाधि मन्दिर बनवाया जहां आज भी पूजा होती है। चम्बा के राजाओं में सबसे प्रसिद्ध राजा साहिल वर्मा हुए हैं। उनके युद्ध कौशल की चम्बा की सीमाओं से बाहिर भी धाक थी और चारों ओर उनकी विजय पताका फहरी । उनकी विजय स्मृति के दो ताम्र-पत्र मिले हैं जो राजा सोम वर्मा और अष्टवर्मा द्वारा साहिल वर्मा

की मृत्यु के 120 वर्ष बाद जारी किए गए। उस समय तक लोगों में उनकी याद ताज़ा थी। इन ताम्र-पत्रों पर साहिल वर्मा की प्रशंसा में वर्णन है :-

"सहसानक, निश्शकलंक मल्ल, मदमाता सिंह, जमदग्नि के पुत्र परशुराम, कर्ण के समान महावीर योद्धा युधिष्ठिर, शिवि के समान धर्मात्मा, दानवीर, जिसने क्षण भर में किरों की सेना की शक्तिशाली ज्वाला को बुझा दिया और जिसकी सहायता के लिये त्रिगत के राजा ने विनयपूर्वक प्रार्थना की।"

कश्मीर की उत्तर-पूर्वी घाटी में रहने वाले किरों ने एक बार पुनः राजा साहिल वर्मा के समय में बहुत बड़ी सेना लेकर आक्रमण किया, उनकी सहायता में डुग्गर एवं बसोहली के राजा भी थे। किन्तु उन्हें लक्ष्मी वर्मा के राज्यकाल के विपरीत भारी पराजय का सामना करना पड़ा। ताम्रपत्र में इसका स्पष्ट उल्लेख है। दूसरे ताम्र पत्र में त्रिगर्त का वर्णन है। कांगड़ा का प्राचीन नाम त्रिगर्त है। इसकी सीमाएं जालन्धर तक फैली थी और रावी और सतलुज के बीच का इलाका त्रिगर्त में शामिल था। ऐसा वर्णन है कि त्रिगर्तपति ने भी राजा साहिल वर्मा से सहायता मांगी; राजा विजयी रहा। इन ताम्र-पत्रों से मालूम होता है कि धौलाधार के नीचे की सारी घाटी, बड़ाबंधाल तक राजा साहिल वर्मा का विजित प्रदेश था। कांगड़ा में राजा के विजय के गीत प्रचलित हैं। कुल्लू का राजा भी कर देता था। और दोनो राज परिवारों के विवाह सम्बन्ध थे।

इतिहास में एक अन्य संकेत तुरुशक आक्रमण का आता है। ऐसा समझा जाता है कि उत्तर-पश्चिम से आने वाले सभी आक्रमणकारियों के लिये यह नाम प्रयुक्त हुआ है। पहले यह सार्थियन के लिये प्रयुक्त हुआ होगा। बाद में यह मुस्लिम आक्रमणकारियों के लिये भी प्रयोग होने लगा जो सातवीं शताब्दी में उत्तर पश्चिमी सीमा पर प्रभावी हुए। तुर्की शाहीवंश शताब्दियों तक काबुल और पेशावर पर राज करता रहा । तुर्की राजा को उसके ब्राह्मण वज़ीर ने 870 ई0 में उखाड़ दिया और हिन्दू राजवंश की नींव डाली, और सिन्धु के किनोर उदभन्दपुर में राजधानी बसाई। यह वंश 980 ई0 तक गान्धार पर राज्य करता रहा। बाद में 1021 ई0 में महमूद गज़नवी ने विजय प्राप्त की। राजतरंगिणी से पता चलता है कि इन राजाओं का कश्मीर के राजवंश और पंजाब के अन्य राज्यों के साथ पारस्परिक सम्बन्ध रहा है। हमें यह परिणाम निकालना पड़ता है कि इन राजाओं ने पश्चिम के आक्रमणकारियों को रोकने के लिये सेनाएं भेजीं। सम्भवतः इन्हीं युद्धों में साहिल वर्मा की सेनाओं ने अपनी वीरता से ख्याति प्राप्त की। साहिल वर्मा ने दीर्घ काल तक राज्य किया। वृद्धावस्था में, अपने कार्यसिद्धि ओर सफलताओं से प्रसिद्धि प्राप्त कर राजा ने अपने पुत्र को राजगद्दी पर बिठा दिया और स्वयं ब्रह्मपुर चले गए। वहां अपने गुरु चरपट नाथ के साथ साधुरूप में तपस्या में लीन हो गए। इन्हीं चौरासी योगियों के कारण भरमौर को चौरासी कहते हैं। चम्बा राज्य को प्रबन्ध की दृष्टि से चौरासी परगनों में बांटा गया।

युगाकर वर्मन 940 ई0 वंशावली में युगाकर वर्मन का उल्लेख नहीं है। एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ है जो उसने अपने राज्यकाल के दसवें वर्ष ब्रह्मपुर के नरसिंह मन्दिर को भूमिदान

के लिये जारी किया है। युगाकर वर्मन ने इस ताम्रपत्र में अपने पिता, माता और अपनी पत्नी त्रिभुवन रेखा देवी के नामों कों अंकित किया है। किंवदन्ती है युगाकर वर्मा ने चम्बा में ईश्वर गौरजा यानी गौरी शंकर का मन्दिर बनवाया।

विदग्ध वर्मन- 960 ई0 इस राजा के समय का एक ताम्रपत्र उपलब्ध है जो राजा ने अपने राज के चौथे वर्ष में दिया था। इस में अपने पिता युगाकर वर्मन और माता योगमती का उल्लेख है। राजा अपने को भूषण गोत्र का वर्णन करता है। एक अधीनस्थ राणा के द्वारा वस्सृ से प्राप्त शिलालेख में राजा विदग्ध के प्रथम राज्य वर्ष का उल्लेख है।

दोगध वर्मन राजा की आज्ञा से अभिलिखित एक शिलाबस्सृ के पस से प्राप्त हुई है जिसमें युगाकर, विदग्ध और होडक (दोग्ध) के नाम हैं तत्पश्चात् विचित्र वर्मन और धैर्य-वर्मन राजा हुए किन्तु उन का ऐतिहासिक उल्लेख नहीं है। विचित्र वर्मन के छोटे भाई ने बन्दरालटा या रामनगर- जम्मू के समीप राज्य की स्थापना की।

शालिवाहन वर्मन 1040 ई0:- राजवंशावली में इस राजा का नाम नहीं है, किन्तु तीन ताम्रपत्र प्राप्त हुए हैं और तीनों में नाम हैं। प्राचीन काल से ही कश्मीर नरेश सीमाओं से लगने वाले पहाड़ी राज्यो पर अपना आधिपत्य जतलाते आए थे किन्तु इस आधिपत्य में अन्तर भी पड़ता रहा। राजा साहिल वर्मा से पहले और 1028 ई0 तक चम्बा पूर्णतः स्वतंत्र रहा। 1028 ई0 में राजा अनन्त देव कश्मीर की गद्दी पर बैठा। उसने पड़ोसी राज्यों पर आक्रमण शुरू किये। राजतरंगिनी से पता चलता है कि उस समय चम्बा पर साल नाम का राजा राज्य करता था। युद्ध होने पर वह हार गया और मारा गया। राजा अनन्तदेव ने वल्लपुर या बिल्लौर पर भी आक्रमण किया। शालवाहन वर्मन के समय के दो शिलालेख सेई और तीसा में प्राप्त हुए जिन पर राजा त्रैलोक्यदेव का नाम खुदा है। यह नाम चम्बा वंशावली में नहीं है किन्तु बिल्लोर में है। इन शिलालेखों पर काल दिया जो 1028-29 ई0 और 1041 ई0 ठहरता है। इससे यह अन्दाज़ा लगता है कि उन दिनों चुराह बल्लौर राज्य का भाग रहा होगा। ताम्र-पत्रों से पता चलता है कि शालवाहन के दो लड़के सोमवर्मन और अष्टवर्मन थे जिन्होंने क्रम से राज्य किया।

सोमवर्मन 1060 ई0 में राजा कश्मीर ने शालवाहन को गद्दी से उतार कर सोमवर्मन को राजा बनाया। पहला ताम्रपत्र सोमवर्मन ने सूर्य ग्रहण के अवसर पर प्रदान किया। इस पर राजाओं के नामें अंकित है जिन्हें राजा की उपाधि दी है। एक राणा को तो महामात्य (प्रधानमंत्री) लिखा है। दूसरे पट्टा द्वारा शिव और विष्णु के मन्दिरों को भूमि दान दी गई है। यह राजा अष्ट के राज्य काल के प्रथम वर्ष की है जिस पर दोनो भाइयों के हस्ताक्षर हैं।

अष्ट-वर्मन 1080 ई0! राजा का नाम वंशावली में नहीं है किन्तु राज तरंगिणी में वर्णन है कि चम्बा के राजा अष्ट वर्मन ने 1087-88 में राजा अनन्तदेव के लड़के कलश के काल में कश्मीर यात्रा की। उस समय कश्मीर की राजधानी में चम्बा से लेकर हज़ारा तक के सात राजा उपस्थित थें। इससे कश्मीर का आधिपत्य सिद्ध होता है। दोनो राज्यों के विवाह सम्बन्धी भी थे। अष्ट वर्मन की बहन राजा कलश की रानी थी।

जष्ट -वर्मन 1105 ई0 जष्टवर्मन का वंशावली में वर्णन नहीं है। किन्तु राजतरंगिणी में लिखा है कि जष्ट ने कश्मीर के राजा सुशाल पुत्र राजा हर्ष की उस समय युद्ध में सहायता की जब कश्मीर पर लाहौर के एक राजकुमार ने आक्रमण किया। सुशाल ने उसे विजयेश्वर के मन्दिर में कैद रखा। लुज (पांगी) में एक पन्निहार पर एक शिलालेख प्राप्त हुआ है जिस पर राजा जष्ट का वर्णन है और सं0 81 तदनुसार 1105 A.D. की तारीख दी है। सम्भवतः यह जष्ट के राजगद्दी पर बैठने का काल है। यह शिला एक अधीनस्थ राणा ने बनवाई। अवश्य ही पांगी उस समय चम्बा राज्य का भाग रहा होगा। राजतरंगिणी में पुनः 1102 ई0 में जष्ट का उल्लेख आता है जब वह भिक्षाचार पौत्र हर्ष की सहायता के लिये गया। सुशाल से गद्दी छीन ली गई थी। सुशाल चार पांच वर्ष चम्बा में रहा। जष्ट का राज्यकाल 1117-18 तक चला। लोह टिकरी, चुराह में एक शिलालेख मिला है जिस पर जष्ट का नाम अंकित है। इससे यह पता चलता है कि जब तक चम्बा का आधिपत्य चुराह पर स्थापित हो गया। वास्तव में चम्बा और बिल्लौर के राजाअें का चुराह के लिये पारस्परिक संघर्ष चलता रहा।

ढाल वर्मन 118 ई0 राजा अष्टवर्मन के भाई ढाल वर्मन का राज्यकाल अल्पकालिक था। ई0 राजा उदय वर्मन 1120! ई0 राजा उदय वर्मन का उल्लेख राज तरंगिणी में है। वंशावली में भी है, किन्तु तिथियां ठीक नहीं हैं। इस राजा के काल में कश्मीर में चल रहे राज सत्ता के लिये संघर्ष में पक्ष बदल लिया था। उदय वर्मन अब राजा सुशाल के सहायक हो गए थे।

इसका कारण यह भी रहा होगा कि राजा सुशाल ने चम्बा में दो राजकुमारियों से विवाह कर लिया। 1128 ई0 में सुशाल की मृत्यु पर यह दो सती हो गई। राजगद्दी के लिये चल रहे निरन्तर संघर्ष के कारण कश्मीर के हालात अनिश्चित थे। भीतरी स्थिति के कारण कश्मीर राज्य कमज़ोर पड़ गया और चम्बा स्वतंत्र हो गया। राज तरंगिणी में इसके पश्चात् चम्बा का कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

ललित वर्मन 1143 ई0 से 1175 ई0! दो प्राप्त शिलालेखों से इस के शासन की जानकारी मिलती है। देवी कोठी में पन्निहार पर बने शिलालेख में वहां के तात्कालिक राणा नागपाल का वर्णन है जिसे राजांक की उपाधि दी गई। दूसरा शिलालेख सल्ही सेचू नाला-पांगी में है। उसे राणा लुद्र पाल ने बनवाया, उसमें सं0 46 अंकित है जो 1170 ई0 है। दो शिलालेखों पर बिल्लौर के दो राजाओं राणा पाल और अजेय पाल के नाम है। राणा पाल ललित वर्मा का समकालीन है। इससे प्रतीत होता है कि चुराह के कुछ भाग के लिये चम्बा और बिल्लौर के राजाओं में संघर्ष रहा है।

विजय वर्मन 1175 ई0! राजा विजय वर्मन ने अपनी वीरता और युद्ध कौशल की छाप छोड़ी। इसलिये प्रजा उसको प्यार करती थी। उसने कश्मीर और लद्दाख पर आक्रमण किये। उत्तरी भारत पर बाहिर से आक्रमण आरम्भ हो गए थे। मुहम्मद गौरी अनेक बार परास्त हो कर भी हिन्दू राजाओं के पारस्परिक वैमनस्यं से उसने हिम्मत नहीं हारी और 1193 ई0 में पुनः चढ़ आया। इस बार बाजी मुहम्मदं गौरी के हाथ रही। पृथ्वी राज के परास्त होने से उत्तरी भारत में राजनैतिक उथल पुथल हुई। विजय वर्मा ने इस अवस्था का पूरा लाभ उठाकर

राज्य की सीमाएं विस्तृत कर लीं।

राजा विजय वर्मन के पश्चात् राजाओं की ऐसी श्रृंखला रही जिनके राज्यकाल उल्लेखनीय प्रसिद्ध प्राप्त नहीं रहे। ये क्रमशः इस प्रकार हैंः- राजावर्मन, सारा वर्मन, कीर्तिवर्मन, अजीत वर्मन, मदन वर्मन, नरकंजर वर्मन, आशा वर्मन! तत्पश्चात् वैरी वर्मन या वैरासी वर्मन हुए। इसके राज्यकाल के ताम्रपत्र पर स्पष्ट तिथि दी है शास्त्र सं0 6, तदनुसार विक्रमी सं0 1387! तदनन्तर माणिक्य वर्मन और पुनः 1397 ई0 में भोट वर्मन गद्दी पर बैठा। इसके काल के एक ताम्रपत्र में तिथि शास्त्र सं0 12 दी है जो 1436 ई0 ठहरती है। भोट वर्मन की मृत्यु का वर्णन उसके पुत्र संग्राम वर्मन द्वारा प्रदत्त ताम्रपत्र में है उससे प्रकट है कि भोट वर्मन की मृत्यु 1442 ई0 में हुई। संग्राम वर्मन ने 1442 ई0 से 1475 ई0 तक राज्य किया।

आनन्द वर्मन 1475 ई0 में शासन आरूढ़ हुआ। इस राजा के काल में भी एक ताम्रपत्र 1481 ई0 में दिया गया। इस की माता का नाम सम्पूर्णा देवी था। आनन्द वर्मन बड़ी धार्मिक वृत्ति के थे और इन्हें अद्भुत दैवी शक्तियों पर अधिकार था। इसका विवाह राजा कांगड़ा की लड़की के साथ हुआ था। एक बार उसके चमत्कारों की परख के लिये उसे खाना परोसा गया तो जानबूझ कर उसकी थाली को बहुत दूर रखा। उसे तीन मुंह वाला गड़वा पानी पीने के लिये दिया गया किन्तु आनन्द वर्मा के कोई कठिनाई नहीं हुई। वह जो इच्छा करते स्वयं चीज पास आ जाती। जब पानी पीना चाहा तो सांपों ने दो मुख बन्द कर दिये और तीसरे मुख से पानी पी लिया। 1512 ई0 में इन का देहान्त हो गया।

गणेश वर्मन 1512 ई0 इस के शासन का पहला ताम्र-पत्र शास्त्र सं. 88 तदनुसार शक सं0 1434, ई0 सन 1512 में दिया गया और अन्तिम शास्त्र सं0 35 तदनुसार 1559 ई0 में दिया। इस का शासन दीर्घकाल तक रहा। कई ताम्र-पत्रों पर इसके पुत्र को युवराज और महाराज पुत्र प्रताप सिंह वर्मा लिखा है। इस प्रकार चम्बा के राज परिवार में पहली बा "सिंह" प्रयुक्त हुआ। गणेन वर्मा ने मोतला, तहसील भटियात में गणेश गढ़ का दुर्ग बनवाया ताकि सीमाओं की रक्षा की जा सके। साथ ही धौलाधार से दक्षिण को राज्य सीमा का विस्ता किया। उसके शासन काल के अन्त में पहाड़ी राज्यों पर मुग़लों का प्रभाव दिखाई देने लगा उस समय तक चार सौ वर्ष की अवधि में चम्बा पूर्ण स्वंतत्र रहा। पहले मुस्लिम आक्रमणका पहाड़ों की ओर ध्यान नहीं दे सके थे। निस्सन्देह कांगड़ा पर कई बार आक्रमंण हुए थे किन् वे शिवालिक से आगे नहीं बढ़ पाए। अकबर 1556 ई0 में गद्दी पर बैठा तो सिकन्दर शा सूरी का पीछा करता हुआ कांगड़ा तक पहुंचा। यहां नूरपुर के राजा धर्मचन्द ने उसका स्वाग किया। गणेश वर्मन के राज्य काल के अन्त में मुगलों का प्रभाव चम्बा में भी महसूस हो लगा। गणेश वर्मा के छः पुत्र थेः प्रताप सिंह, जीत सिंह, वीर बहादूर, हरी सिंह, शत्रुघ्नसिं रूपानन्द सिंह।

प्रताप सिंह वर्मनः- 1559 ई0 इसके बारें में प्रसिद्ध है कि वह बड़ा दानवीर औ प्रजा पालक था। लक्ष्मी नारायण मन्दिर और अन्य मन्दिरों की मुरम्मत की आवश्यकता किन्तु खज़ाना में पैसा नहीं था। इस समस्या क़ो सुलझाने के लिये उसने मंत्रियों, एहलका

की एक बैठक बुलाई। उन्होंने कर लगाने का सुझाव दिया। राजा के प्रजा पर यह भार स्वीकार्य नहीं था। अगले दिन होल परगना का एक व्यक्ति दरबार में उपस्थित हुआ, उसने तांबा का एक टुकड़ा पेश किया और कहा कि उसके इलाके में तांबे की खान निकली है। राजा ने तुरन्त तांबा निकालने की आज्ञा दी। तांबा की आय से मरम्मत का काम किया गया और नये मन्दिर बनवाये। खान समाप्त हो गई या बन्द कर दी गई किन्तु धातु के पत्थर अभी भी ढेरों पड़े हैं और उस ग्राम के लोगों को धाई (धातु से) कहते हैं। कुछ समय पश्चात् प्रताप सिंह का कांगड़ा के राजा के साथ युद्ध हुआ। इसमें कटोच राजा की सेना हार गई और राजा जीतचन्द का भाई मारा गया। बहुत सा लूट का माल हाथ आया जो घोड़ों, हथियारों पर लादकर चम्बा लाया गया। घरोह और चड़ी के इलाके चम्बा में मिला लिये गए। गुलेर राजा की राजधानी गुलेर पर भी चम्बा राजा का आधिपत्य हो गया।

प्रताप सिंह वर्मन अकबर का समकालीन था। सम्भव है चम्बा उस काल में मुगलों के प्रभाव में आया हो। क्योंकि अकबर ने शाही दबदबा बढ़ाने के लिये राजा टोडरमल को कांगड़ा में पहाड़ी रियास्तों को अधिकार में करने के लिये भेजा। कांगड़ा का एक बड़ा भाग अधिकृत कर लिया गया। अन्य रियास्तों में भी ऐसी ही मांग हो गई चम्बा को रिहलू और उसके पूर्व का भाग, चड़ी, घरोह मुगलों के हवाले करना पड़ा। तत्पश्चात् दो सै वर्षों तक चम्बा मुगल साम्राज्य के अधीन रहा।

लाहौल से प्राप्त ताम्रपत्रों पर जो काल अंकित हैं, वह राजा प्रताप सिंह के काल के हैंः- शास्त्र सं0 62। इसी वर्ष राजा का देहान्त हुआ। अन्य काल शास्त्र सं0 55 है, तदनुसार विक्रमी 1635! दसवीं ग्यारहवीं शताब्दी में लाहौल तक चम्बा राज्य का विस्तार था। वीर-वाहून का राज्यकाल केवल चार वर्ष 1586 से 1589 ई0 तक ही रहा। 1589 ई0 में बल भद्र सिंहासन पर बैठे। यह राजा धार्मिक वृत्ति और दान वीरता के लिये प्रसिद्ध है। इस विषय में अनेक कहानियां जुड़ी हैं। वह ब्राह्मणों को बड़ी उदारता से बहुत दान देता था। और उसकी प्रजा उसे राजा कर्ण और बली कहती थी। जब तक वह कोई दान-दक्षिणा न दे, अन्न ग्रहण नहीं करता था। 42 से अधिक भूमिदान ताम्रपत्र प्रदान किये। कोई भिखारी खाली हाथ नहीं जाता था, जो चीज़ पास हो, उसका जो भी मूल्य हो, उसे दे डालता था। लक्ष्मी नारायण मन्दिर के चढ़ाये गए हीरे-जवाहरात और भूमि आज तक हैं। यह दान इस सीमा तक बढ़ गया कि खज़ाना खाली हो गया। राज्य का काम चलाना कठिन हो गया। उसका ज्येष्ठ पुत्र जनारधन व्यस्क हुआ तो एहलकारों ने उसे गद्दी पर बिठा दिया और राजा बल भद्र के भड़ियों ग्राम में पहुँचा दिया। उसके निर्वाह के लिये वहां एक मकान और ज़मीन देदी। राजा ने वहाँ भी प्रतिदिन ज़मीन दान देना प्रारम्भ कर दिया। ज़मीन समाप्त होने पर घर का एक एक फुट करके दान कर दिया और स्वयं घर से बाहिर रहने लगा। खाना पीना भी छोड़ दिया फिर और भूमि उसे दी गई। ब्राह्मणों को दी गई भूमि आज तक उनके पास है।

जनारधन ने जब राज्य की बागडोर सम्भाली तो थोड़े समय पश्चात् ही नूरपुर के राजा के साथ युद्ध छिड़ गया। उस समय राजा सूरजमल का भाई जगत सिंह जहांगीर का

बड़ा कृपापात्र था। इस आशय से ही उसने युद्ध प्रारम्भ किया कि उसे लाहौर के गवर्नर से सहायता मिलेगी। 12 वर्षों तक अनिर्णीत युद्ध चलता रहा, कभी कभी बीच में शान्ति हो जाती थी। बादशाह नाया से पता चलता है कि नूरपुर के राजा सूरज मल ने मुगल साम्राज्य से स्वतंत्र होने की घोषणा कर दी। यह 1618 ई0 की बात है। मुगल सेना ने उसे नूरपुर से भागने पर मजबूर कर दिया तो उसने कुछ समय के लिये चम्बा के एक किले में शरण ली और अन्त में राजधानी चम्बा को चला आया। यहीं उसकी मृत्यु हो गई। मुगल सेनापति ने राजा चम्बा को आज्ञा-पत्र भेजा कि राजा सूरजमल के सारे धन और जायदाद को उनके हवाले कर दो नहीं तो सख्त सजा मिलेगी। राजा जनारधन ने सूरज मल के भाई के हाथ सब कुछ भेज दिया। जहांगीर ने बंगाल से जगतसिंह को बुलाकर उसे एक हज़ारी का मनसब देकर कांगड़ा के किला का घेरा करने में सहायता के लिये भेजा। वह नूरपुर का राजा भी बन गया। कांगड़ा का किला जीतने के पश्चात् जहांगीर जनवरी, 1622 में कांगड़ा आया। वहां अन्य पहाड़ी राजाओं के साथ राजा चम्बा भी आया। उसने बादशाह को भेंट दीं तुगलके जहांगीरी में वर्णन है कि चम्बा के राजाओं ने अभी तक किसी बादशाह की आज्ञा नहीं मानी है और न भेंट दी है। जहांगीर ने राजा चम्बा को सब प्रकार की कृपाओं से सुशोभित किया। कुछ समय पश्चात् पुनः शत्रुता बढ़ गई। मुगल गवर्नर ने जगत सिंह की सहायतार्थ सेना भेजी। ढलोग के स्थान पर निर्णायक युद्ध हुआ। चम्बा की सेना हार गई और राजा का भाई विशम्भर मारा गया! जगतसिंह सेना लेकर राजधानी की ओर बढ़ा जिस पर अधिकार करके उसने खूब लूटा, जनारधन भाग गया। जगतसिंह ने धोखा से शान्ति के बहाने उसे बुलाकर बातचीत के दौरान जनारधन को तलवार घौंप कर मार डाला, राजा अपनी रक्षा न कर सका क्योंकि तलवार का दस्ता म्यान से रस्सी से बंधा था। तब से यह परम्परा बनी है कि चम्बा के राजा खुली तलवार रखते हैं। यह घटना चम्बा के महल में 1623 में हुई।

जगत सिंह ने आज्ञा दे रखी थी कि यदि राजा के घर कोई पुत्र हो तो उसे तुरन्त मार डाला जाए। कहते हैं कि जनारधन के पुत्र पृथ्वी सिंह को उसकी दाई (आया) जाटलू छुपा कर मण्डी ले गई। जनारधन की मृत्यु के पश्चात् कोई उत्तराधिकारी मौजूद न था, इस लिए जगत सिंह के एहलकार बीस वर्ष तक चम्बा पर राज्य करते रहें उसने तारागढ़ का दुर्ग चम्बा के इलाका में बनवाया। यह किला 1641 ई0 तक जगत सिंह के बड़े काम आया। यह किला भटियात में ककीरा-वकलोह से चवाड़ी जाते हुए सड़क से तीन किलोमीटर पहाड़ी मार्ग पर चम्बा नूरपुर सीमा पर स्थित है। किले के नीचे तारागढ़ नामक गांव है। राजा जगतसिंह ने 1625-30 ई0 में किला और तारागढ़ गाँव में अपने लिये निवास भी बनवाया । जगतसिंह ने इस दुर्ग को मुगलों के साथ युद्ध में प्रयोग किया था और यहाँ भारी किलाबन्दी की। यह किला मुगलों के अधिकार में भी रहा और उनकी यहां सेना रही । चम्बा रियास्त की सेना की टुकड़ी भी इसकी रक्षा के लिये रहती रही है। जब जगतसिंह ने मुगलों से स्वतंत्र होने की घोषणा की तो यहां ही आकर शरण ली। सम्भवतः राजा बलभद्र को जगतसिंह ने अपने अधीन 1629 ई0 में चम्बा की राजगद्दी पर बिठाया। वह 1641 तक राज करता रहा। उसका

पोता पृथ्वी सिंह 1641 में वापस आ गया और राजगद्दी पर बिठाया गया। 1642 में वीरभद्र की मृत्यु हो गई।

पृथ्वी सिंह 1642 ई0! पृथ्वी सिंह मण्डी में ही व्यस्क हुआ और राज्य वापस लेने के अवसर की प्रतीक्षा करता रहा। 1641 में जब राजा जगत सिंह अपने पुत्र सहित मुगलों से बागी हो गया तो उसे अवसर मिल गया। पृथ्वी सिंह ने भण्डी और सुकेत के राजाओं से धन और बल सहायता ली ओर रोहतांग जोत पार कर लाहौल पहुंचा, फिर चनैहणी के जोत से चुराह आया! चुराह पर अधिकार कर वह राजधानी चम्बा की ओर बढ़ा और नूरपुर के एहलकारों को खदेड़ दिया। यह घटना 1641 की गर्मियों की है। उसी वर्ष वह मुगल छावनी पठानकोट में गया। वहां से उसे लाहौर दरबार में अभिनन्दन देने भेजा। राजा जगत सिंह ने मुगल सेनाओं का वीरता के साथ मुकाबला किया। इसके लिये वह चिर से तैयारी कर रहा था। उसने भौकोट, नूरपुर और तारागढ़ में भारी किलाबन्दी कर ली। अक्तूबर, 1641 में मुगल सेना ने भौकोट को घेर लिया। जब वहां मुगल सेना का दबाब बढ़ा तो जगत सिंह भौकोट खाली कर नूरपुर को हट गया, फिर उसे भी खाली कर तारागढ़ आ गया। बादशाहनामा में लिखा है कि भौकोट या नूरपुर के घेरे के समय चम्बा का राजा पृथ्वी सिंह भी मौजूद था। उसे मुगल दरबार ने राजा की उपाधि और एक हज़ारी पद देकर तारागढ़ पर आक्रमण करने के लिये चम्बा भेजा ताकि वह आवश्यक तैयारी कर ले। पृथ्वी सिंह ने अपने पिता के वध का बदला भी लेना था। उसने बसोहली के राजा संग्राम सिंह को भी सहायता के लिये बुला लिया ओर बदले में भलेई का इलाका उसे सौंप दिया। पृथ्वीसिंह ने गुलेर के राजा मानसिंह के साथ किला को घेर लिया। जगतसिंह ने अपनी स्थिति कमज़ोर जान बादशाह से दया की प्रार्थना की । वह दरबार में हाज़िर हुआ। बादशाह ने उसे क्षमा कर दिया ओर राज्य भी वापस दे दिया। तारागढ़ में मुगलों ने अपनी सेना बिठा दी।

तत्पश्चात् पृथ्वीसिंह अपने राज्य को सुदृढ़ बनाने में लगां-पांगी पर राणा लोग ही जमे बैठे थे, चम्बा का केवल आधिपत्य ही था। उसने उन्हें हटाकर अपने एहलकार स्थापित किये। इस प्रकार पांगी को सीधे अपने अधीन किया। किलाड़ और साच के बीच एक चट्टान पर अभिलेख है जिसमें राजा का नाम और काल शास्त्र सं0 18 (तदनुसार 1642 ई0) अंकित है। इस तंग स्थान की कटाई, सड़क बनाने के लिये राजाज्ञा से हुई। पांगी और चुराह में कारदार कोठियां बनवाई। नूरपुर राजा के साथ युद्ध के पश्चात् पृथ्वीसिंह और संग्राम पाल में भलेई परगना के लिये झगड़ा पैदा हो गया जिसका मुगल सरदार ने 1648 ई0 में चम्बा के पक्ष में निर्णय कर दिया। राज्य को सुदृढ़ करने के पश्चात् राजा प्रयाग की तीर्थ यात्रा पर गया। कहते हैं कि वह शाहजहां के काल में नौ बार दिल्ली गया और शाहजहां का कृपा-पात्र रहा। उसे कांगड़ा में जसवां की जागीर मिली 190 वर्ष तक यह चम्बा राज्य के साथ जुड़ी रही। यह जागीर वास्तव में दून और नादौन की थी जो उग्रसिंह के काल में वापस ले ली गई। पृथ्वी सिंह को अनेक कीमती उपहार भी मिले जिन में एक कटार थी जिसके सरपंच पर बड़ा जड़ाऊ नीलम लगा था। एक अवसर पर शाहजहां ने चम्बा के राजकुलदेव रघुवीर की मूर्ति दी। इस

मूर्ति को मुगलों के महल में पत्थर के तौर पर प्रयोग करते थे। कहते हैं कि पृथ्वीसिंह अति सुन्दर था। उसकी सुन्दरता की चर्चा महलों में भी फैली थी। शाही जनान खाना ने उसे देखने की इच्छा जतलाई। उसकी आंखों पर पट्टी बान्ध कर ले जाया गया। पृथ्वी सिंह के आठ पुत्र थे- शत्रुसिंह, जयसिंह, इन्द्रसिंह, महीपत सिंह, रघुनाथसिंह, रामसिंह, शक्त सिंह और राजसिंह। इसके पश्चात् 'वर्मन' का प्रयोग बन्द हो गया।

किंवदन्ती है कि भरभौर के गद्दी खजो पृथ्वी सिंह के समय में औरंगज़ेब के अत्यचारों से बचने के लिये लाहौर से आकर भरभौर बस गए। वास्तव में यह स्थानान्तरण इससे भी पहले हो रहा था। कहावत है:- उजड़या लाहौर बसया भरभौर।

खजियार में खत्री नाग का मन्दिर महला में हिड़िम्बा का और चम्बा और सीताराम का मन्दिर इसी राज्य के काल में दाई बाटलू ने बनवाये, जिसने राजा पृथ्वी सिंह के जीवन की रक्षा की थीं

चतर सिंह 1664 ई0! इस राजा का वास्तविक नाम शत्रुसिंह और प्रचलित नाम चतरसिंह है। राजगद्दी पर बैठते ही इसने अपने भाई जयसिंह को वज़ीर नियुक्त किया। और उसे भलेई का इलाका वापस लेने के लिये बसोहली भेजा। जो निर्णय पृथ्वी सिंह के काल में लिया गया था, उस पर कार्यवाही नहीं हुई। राजा बसोहली ने इन्कार किया तो उस पर चढ़ाई की और भलेई को राज्य में मिला लिया गया। पंजाब के गवर्नर मीर खान ने सनद जारी कर इसे पक्का कर दिया। राजा चतरसिंह पांगी गया, वहां से पाडर पर आक्रमण कर वहां के राणा को हटा दिया और अपने अधिकारी नियुक्त किये। वहां उसने चतरगढ़ नाम का एक नगर बसाया जो मध्य एशिया के व्यापार का केन्द्र बन गया। नूरपुर और चम्बा का जस्कर और लद्दाख के साथ इस मार्ग से व्यापार होता था। 1836 ई0 तक यह नगर बढ़ा, फैला जब डोगरा शासकों ने इसे नष्ट कर दिया और इसे नया नाम गुलाबगढ़ दिया।

1678 ई0 में औरंगजेब ने राज्य में सभी हिन्दू मन्दिरों को गिराने का आदेश दिया। राजा चतरसिंह ने यह आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया और चम्बा के सभी मन्दिरों पर सोने के पाने के कलश चढ़वा दिये जो कि औरंगजेब की आज्ञा के उल्लंघन के लिये था। बादशाह यह सुनकर जलभुन गया और राजा को दिल्ली बुला भेजा। राजा ने स्वयं न जाकर अपने भाई शक्त सिंह को भेजा। उसके साथ गुलेर का राजसिंह भी था। दोनों वनवास के स्थान से वापस आ गए और दिल्ली नहीं गए। किसी प्रकार कालान्तर में बादशाह का क्रोध शान्त हो गया।

उन दिनों पंजाब का सूबेदार मिरजा रज़ाबेग, जो कलानौर रहता था, पहाड़ी राज्यों पर बहुधा चढ़ाई करके उन्हें तंग करता था। इस पर इन राज्यों ने इसके विरुद्ध एक मित्रमंडल बना ली, जिसमें चम्बा के राजा चतरसिंह, गुलेर के राजसिंह, बसोहली के धीरज पाल और जम्मू के किरपालदेव थे। जम्मू के राजा ने पठानों की एक सेना सूबेदार के विरुद्ध भेजी सूबेदार हार गया और राजा अपना खोया इलाका वापस लेने में सफल रहा ।

सम्भवतः चतर सिंह के राज्यकाल में लाहौल का चम्बा और कुल्लू के बीच बटवारा हो गया। इससे पूर्व चम्बा का इलाका चन्द्र और भागा के संगम तक था। शेष लाहौल कुल्लू के आधीन लद्दाख में शामिल था। पूर्वी तिब्बत के शासक ने लद्दाख पर 1646-47 में आक्रमण किया, जिससे लद्दाख का राज्य कमजोर हो गया। कुल्लू के राजा विधिसिंह ने इसका लाभ उठाया और लद्दाख के कर्मचारियों को निकाल बाहिर किया। चम्बा राज्य के अधिकार से लाहौल की मुख्य घाटी का ऊपरी भाग छूट गया। कुल्लू की किंवदन्ती के अनुसार विजय के कारण लाहौल कुल्लू राज्य का भाग बना। चतर सिंह की 1690 में मृत्यु हो गई। उसके दो पुत्र उदय सिंह और लक्ष्मण सिंह थे।

उदय सिंह 1690 ई0! उदयसिंह का राज्यकाल शुभ लक्षणों से आरम्भ हुआ। राजा सुशिक्षित और सुसंस्कृत था। लोग सन्तुष्ट थे। राज्य में खुशहाली थी। राजा चतरसिंह का भाई जयसिंह उस समय राज्य का मंत्री था। वह योग्य था। उदयसिंह के सिंहासन पर बैठने के कुछ समय पश्चात् जयसिंह की मृत्यु हो गई। गुलेर का राजा राजसिंह भी मर गया। उसका अव्यसक पुत्र दिलीपसिंह उसका उत्तराधिकारी बना। उदयसिंह को उसका संरक्षक नियुक्त किया गया। दिलीपसिंह की छोटी आयु का लाभ उठाकर राजा ज़म्मू, बसोहली और भडू ने गुलेर पर आक्रमण कर दिया। राजा उदयसिंह ने राजा मण्डी, सिवा और काहलूर की सहायता से आक्रमणकारियों को खदेड़ दिया और बालक राजा को पुनः गद्दी पर बिठाया जब तक बज़ीर जयसिंह का परामर्श मिलता रहा, राज्य में सब कार्य उत्तम रीति से चलता रहा, सम्पन्नता रही। किन्तु उसकी मृत्यु के पश्चात् राजा उदयसिंह व्यसनों में पड़ गया। शासनसूत्र ढीला पड़ गया। राजा का एक नाई की लड़की के साथ प्यार हो गया, राजा ने नाई को वज़ीर बनाकर शासन उसके सुपुर्द कर दिया। अधिकारियों ने राजा को गद्दी से उतारकर उसके चचेरे भाई उगर सिंह को राज प्रतिनिधि नियुक्त कर दिया। एक महीने के पश्चात् राजा को फिर बहाल कर दिया। उगर सिंह भय के कारण जम्मू भाग गया। राजा में सुधार नहीं हो पाया और स्थिति पहिले से भी खराब हो गई। अधिकारियों ने राजा को मारने और उसके छोटे भाई लक्ष्मण सिंह को गद्दी पर बिठाने की योजना रची। लक्ष्मण सिंह भी उनकी चालों में आ गया। एक दिन उदयसिंह उदयपुर के जंगल में शिकार खेलने गया था कि षडयन्त्रकारियों ने बन्दूक की गोलियां चलानी शुरू कर दीं। उदय सिंह ने खतरे को भांप लिया और अपने नौकरों को सहायता के लिये बुलाया। लक्ष्मण सिंह के हृदय में भ्रातृभाव जागा और वह षड़यन्त्रकारियों को छोड़ भाई की सहायता के लिये आ गया। षड़यन्त्रकारियों ने पहले लक्ष्मण सिंह और तत्पश्चात् राजा को मारने का निश्चय किया। राजा उदयसिंह सख्त जख्मी हुआ और कुछ दिन बाद मर गया। उदयसिंह की मृत्यु 1720 ई0 में हुई। वह निस्सन्तान मरा, लक्ष्मण की भी कोई सन्तान नहीं थी।

उगर सिंह 1720 ई0! उदय सिंह के पुनः राजगद्दी पर बैठने पर उगरसिंह जम्मू भाग गया था। वहां वह राजा जम्मू ध्रुवदेव की सेना में साधारण सिपाही भरती हो गया। एक बार वह तवी से स्नान कर लोटा जल हाथ में लिये आ रहा था कि उसे मार्ग में मस्त हाथी मिला

जो खुल गया था। हाथी ने उगर सिंह पर आक्रमण कर दिया। उसने हाथी पर लोटा दे मारा और तलवार सून्त कर उसकी सूण्ड काट डाली। राजा को पता लगने पर उसने उगर सिंह को बुला भेजा। तब राजा को उगर सिंह के चम्बा राजघराने से निकट सम्बन्धों का पता चला। उदय सिंह के निस्सन्तान मरने के पश्चात् वही चम्बा राज्य का निकटतम उत्तराधिकारी था। उदय सिंह और उसके भाई के बध के समाचार पहुंचे तो ध्रुवदेव ने उगर सिंह को पूरी सहायता के साथ चम्बा वापस भेजा और उसे गद्दी पर बिठा दिया।

किंवदन्ती है कि मृतराजा का भूत उगरसिंह को दिखाई देता और उसे बहुत तंग करता था। उसे शान्त करने के लिये उगर सिंह ने वध के स्थान पर उदयपुर में एक मन्दिर बनवाया। और एक कर लगाया जिसे "तिरसेरा उदयसिंह याना और औतरयाना" नाम दिया।

उगरसिंह के मन में राजगद्दी पर बैठने के थोड़े समय पश्चात् ही अपने भतीजे दलेल सिंह के विषय में सन्देह होने लगा। उस समय वह अपने मामा के पास जम्मू रहता था, पुत्र रघुनाथसिंह था, राजा ने मुगल हाकिम को कहकर जेल में डलवा दिया। पहले तो उगरसिंह सर्वप्रिय था किन्तु जैसे जैसे समय गुज़रता गया, दरबारियों के मन में तबदीली आती गई, उन्होंने उसे गद्दी से उतार कर दलेल सिंह को बिठाने का निश्चय किया। इस काम के लिये वह मुगल राजप्रतिनिधि के पास दलेल सिंह को छुड़ाने के लिये गए। एक लाख रुपयों की भेंट दी। मुगल वायसराय ने उसे चम्बा राजा की सनद दी और सेना भेजी। दलेल सिंह के आने की खबर पर उगर सेन ने विरोध नहीं किया, किन्तु रावी का पुल तोड़ दिया, नगर को आग लगा दी और स्वयं चामुण्डा मन्दिर जाकर आग का दृश्य देखता रहा और बाद में भरभौर की ओर भाग गया। चनौहता में जूह के स्थान पर उगर सिंह राणा की बन्दूक की गोली से घायल हो गया। वहां से वह कांगड़ा की ओर भाग गया और वहीं उसकी मृत्यु हो गई। राजा पृथ्वी सिंह को नादौन और दून की जो जागीर मिली थी, वह छीन ली गई।

दलेल सिंह 1735 ई0 दलेल सिंह ने राजगद्दी प्राप्त करने के बाद पहला काम यह किया कि उगर सिंह के दोनो पुत्रों को लाहौर के किला में बन्द करवाया। तेरह वर्ष तक वह किला में बन्द रहे। दलेल सिंह ने उन सबं को इनाम दिये जिन्होंने राज्य प्राप्त करने में उसकी सहायता की। उगर सिंह के पुत्र उमेद सिंह और शेर सिंह को कई लोग वास्तविक उत्तराधिकारी समझते थे, और ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में थे कि उमेदसिंह को राजगद्दी पर बिठा सकें। वे उमेद सिंह को जेल से मुक्ति दिलाने में इस प्रकार से सफल हुए कि उमेदसिंह का एक नौकर जो चम्बा के कोतवाल परिवार से था, उस नवयुवक की शक्ल सूरत और आयु उमेद सिंह जैसी थी, दोनों ने आपसी कपड़े बदल लिये, वह नौकर उमेद सिंह की जगह जेल मे रहा और उमेदसिंह को भगा दिया। कारणवश यह भेद खुल गया और नौकर को हाकिम के सामने लाय गया। हाकिम ने नौकर से पूछा कि उसने अपनी जान को क्यों खतरे में डाला। नौकर ने कह कि उसने अपने मालिक के प्रति अपने कर्तव्य का पालन किया है। नवाब इस उत्तर से बहुत प्रसन्न हुआ और नौकर को छोड़ दिया गया। उमेद सिंह पगड़ लिया गया और लाहौर लाय गया। जब नवाब को पता चला कि उमेदसिंह ही चम्बा राज्य का वास्तविक अधिकारी है तं

उसे सनद और सेना लेकर चम्बा भेजा गया ताकि वह अपना राज्य वापस ले सके। उमेद सिंह का विवाह जसरोटा के राजा की लड़की के साथ हुआ था। वह उधर से और बसोहली से सहायता लेता हुआ चम्बा पहुंचा। दलेल सिंह ने कोई विरोध नहीं किया बल्कि कानूनी तौर परे उत्तराधिकारी जान राजगद्दी सौंप दी। उमेदसिंह ने भी उसके साथ उदारता का व्यवहार किया। दलेल सिंह कुछ समय तक तो राजधानी में रहा। बाद में साधु हो गया। ज्वाला मुखी में इसकी मृत्यु हो गई। पठियार का इलाका दलेल सिंह के जागीर को तौर पर दिया गया।

उमेद सिंह 1748 ई0 उमेद सिंह एक न्यायप्रिय और योग्य शासक था। उसका राज्य काल भारत के इतिहास का महत्वपूर्ण काल था। मुगल साम्राज्य टूट रहा था। प्रान्तो के हाकिम स्वतन्त्र हो रहे थे। मराठों और पठानों का युद्ध आपस में आधिपत्य के लिये चल रहा था। उच्चत्तम सत्ता समाप्त हो रही थी। पहाड़ी राजाओं ने समय का लाभ उठाया और गुलामी का जुआ उतार फैंका। उस सारे प्रदेश पर पुनः अधिकार कर लिया जिससे मुगलों ने उन्हें वंचित किया था। चम्बा रियास्त का भी एक बड़ा भाग धौलाधार के दक्षिण की ओर जब्त किया था। उमेद सिंह ने इस सारे इलाके पर पुनः आधिपत्य स्थापित कर लिया और अपनी विजय वाहिनी को दक्षिण में तराई में बंधाल तक ले गया। उसकी सेना ने पालमपुर के समीप पठियार के किले को घेर लिया। बल्कि बंधाल में भी अपने पांव जमा लियें यह राज्य विस्तार 1750 और 1760 के बीच हुआ और राज्य प्राचीन सीमाओं तक फैल गया। जब चड़ी पर अधिकार किया तो 1762 में एहमद शाह दुर्रानी ने एक चिट्ठी लिखी जो अभी भी संग्रहालय में है। मुगलों का राज्य पंजाब से समाप्त होकर पठान एहमदशाह दुर्रानी अधिकार कर बैठा था। 1767 ई0 तक रियास्त स्वतंत्र रहीं बाद में सिखों का प्रभाव बढ़ा। अखण्ड चण्डी महल राजा उमेद सिंह ने बनवाया। राजनगर में अपने बेटे राजसिंह के नाम पर महल बनवाया। इसी ने रंगमहल की नींव डाली। स्मरण रहे कि पहाड़ी राज्य और कांगड़ा का मुगल गवर्नर भी मराठों के आधीन हो गए थे। उमेद सिंह की मृतयु 13 बैशाख सम्वत् 1820 में हो गई। उसने आज्ञा दे रखी थी कि उसके साथ कोई रानी सती न हो।

राजसिंह 1764 ई0! अपने पिता राजा उमेद सिंह की मृत्यु के समय राजसिंह की आयु केवल 9 वर्ष की थी। उमेद सिंह को अपने छोटे भाई के इरादों के प्रति सन्देह था। इस लिये उसने गुप्त सन्देश छोड़ रखा था कि शेरसिंह को पकड़ कर बन्द रखा जाए। ऐसा ही किया गया, इससे भय का निवारण हुआ। शीघ्र ही कांगड़ा के राजा धमण्डचन्द ने राजसिंह को अव्यस्कता का लाभ उठाकर पठियार के दुर्ग से और बड़ा बंधाल से चम्बा की सेना को भगा दिया किन्तु राज प्रतिनिधि रानी ने जो जम्मू की राजकुमारी थी, राजा रणजीत देव से सहायता लेकर खोया इलाका पुनः वापस लिया। किन्तु ऐसे दिखता है कि राजा कांगड़ा ने अधिक सफल प्रयास से रिहलू से पूर्व तक सारा इलाका पुनः जीत लिया। जम्मू के राजा रणजीत देव ने रानी के कारण दखल अन्दाजी शुरू कर दी। सम्भवतः वह चम्बा पर अपना अधीयमान स्थापित करना चाहता था। मुगल साम्राज्य के पतन के साथ रणजीत देव स्वतंत्र हो गया और बढ़ते बढ़ते चनाब और रावी के बीच की पहाड़ी रियास्तों पर प्रभाव डालने लगा। चम्बा में

उसने अपना एक कर्मचारी अकलू नामक वज़ीर नियुक्त कर दिया। जब तक राजमाता जीवित रही, सब शान्त रहा। जब राजसिंह व्यस्क हुआ और गद्दी पर बैठा तो उसने अकलू को जेल में डाल दिया। राजसिंह को उनके इरादों पर सन्देह था। रणजीत देव ने इसे अपना अपमान जान बसोहली के राजा अमृत देवपाल के आधीन सेना द्वारा चम्बा पर चढ़ाई कर दी। उस समय राजसिंह पंजाब के गवर्नर से मिलने कलानौर गया था। वापसी पर उसे नूरपुर में आक्रमण का पता चला तुरन्त उसने रमगढ़िया सरदारों से सहायता मांगी और उन्हें एक लाख रूपये दिये। तीन मास तक जम्मू की सेना का चम्बा पर आधिपत्य रहा और अन्त में राजसिंह उन्हें खदेड़ने में सफल हो गया। यह 1775 ई0 की बात है और चम्बा के इतिहास में सिखों का पहली बार वर्णन आता है।

1767 ई0 में दुरानी का राज्य पूर्वी और मध्य पंजाब में समाप्त हो गया। एहमदशाह अब्दाली का आक्रमण हुआ। किन्तु सिखों ने बड़ी तेज़ी से राजनैतिक शक्ति प्राप्त कर ली। उनके सहायक सैन्यदल देश में चारों ओर घूमते हुए लूटमार करते थे और महिलाओं का बलात्कार रणजीत सिंह के राज्य की स्थापना से पहिले उन्होंने बारह मिस्लें स्थापित कीं, उनमें एक रामगढ़िया मिसल थी। इस मिसल का पहला मुखिया जस्सा सिंह था जिसने 1770 ई0 में कांगड़ा की पहाड़ियों पर आक्रमण किया।। उसने कांगड़ा के राजा घमण्डचन्द को परास्त किया। शायद इसी कारण राजसि़ंह उसके पास जम्मू के विरूद्ध सहायता के लिये गया। किन्तु 1776 ई0 में कन्हैया मिसल के जयसिंह ने उसे परास्त कर दिया। पहाड़ी राज्य उसके आधीन हो गए। जयसिंह कन्हैया मिसल के नाम से एक दस्तावेज़ प्राप्त है जिसमें चम्बा को रु0 4001 कर देना निश्चित किया है। राजसिंह का विवाह भद्रवाह के सम्पत पाल को लड़की से हुआ। उससे 1775 ई0 में एक लड़का जीतसिंह उत्पन्न हुआ।

1786 ई0 में चम्बा की सेना ने जम्मू के राजा वृजराज देव के नियंत्रण पर किशतवाड़ पर आक्रमण किया। चम्बा की सेना छ' मास तक किशतवाड़ में रही। सर्दियों में वापस बुला ली गई। इस बीच किशतवाड़ का राजा जो कश्मीर घाटी को भाग गया था, कश्मीर के उस समय के शासक दुर्रानी से सेना लेकर आया। किशतवाड़ पुनः चम्बा से अलग हो गया।

आने वाला समय चम्बा के लिये शुभ न रहा। 1775 ई0 में कांगड़ा के राज्य पर घमण्डचन्द का पोता संसारचन्द गद्दी पर बैठा। कांगड़ा पर लगभग 150 वर्ष तक मुग़लों का आधिपत्य रहा और बाद में यह कन्हैया मिसल के पास चला गया। 1786 ई0 में पुनः कांगड़ा का राजवंश दुर्ग पर अपना अधिकार स्थापित कर पाया। दुर्ग पर अधिकार हो जाने से और सिखों के पहाड़ों से हट जाने के बाद संसारचन्द को अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति को खुली छुट्टी मिल गई। उसने जालन्धर ग्रुप की ग्यारह रियास्तों पर अपनी परम्परागत सरदारी का दावा किया और सर्वोच्च शक्ति ग्रहण कर ली। उसने उन्हें कर देने के लिये बाध्य किया और उनके इलाकों पर अधिकार कर लिया। इसके अनुसार उसने राजसिंह से रिहलू के इलाका की मांग की राजसिंह ने इन्कार किया। चूंकि युद्ध अवश्यम्भावी दिखाई देता था, राजसिंह ने तैयारी आरम्भ कर दी। वह स्वयं रिहलू गया, किला की मरम्मत करवाई और उसे अधिक

मज़बूत बनाया । संसारचन्द भी खामोश न था, उसने गुलेर के वज़ीर ध्यानचन्द से सन्धि कर ली। ध्यानचन्द ने कोटला पर अधिकार किया हुआ था। चम्बा की सेना सीमा पर देखभाल कर रही थी। स्वयं राजा जयसिंह शाहपुर के पास नेरटी में अपनी छोटी सी टुकड़ी और नूरपुर की सेना की टुकड़ियों के साथ था। संसारचन्द को इसकी खबर मिली तो गुप्तरूप से उसने धावा बोल दिया। नूरपुर की टुकड़ी तो घबरा कर भाग खड़ी हुई। राजा चम्बा के साथ केवल 45 आदमी रह गए राजा के अधिकारियों ने उसे वहां से हट जाने का परमर्श दिया। किन्तु राजा ने अपमान समझा कि शत्रु से भाग जाए । उसके नौकर और अनुचर पहले गिरे, बाद में राजा को गोली लगी, फिर भी वह वीरता के साथ लड़ता रहा। शत्रुओं का सफाया करता रहा और वीरता के जौहर दिखाता रहा। आखिर जीतसिंह पूरविया नाम के व्यक्ति ने पीठ के पीछे से तलवार से सिर पर वार किया। राजसिंह ने हाथ से लहू पूंछा और एक बड़े पत्थर पर हाथ का आश्रय लिया और वहीं गिरकर मर गया। कहा जाता है कि खून से रंगे हाथ का चिन्ह अब भी दिखाई देता है। संसारचन्द ने राजसिंह को जीवित पकड़ने की आज्ञा दी थी, उसकी मौत से उसे बड़ा दुख हुआ। विक्रमी 1845 (1788 ई0) का एक ताम्रपत्र उपलब्ध है जिस पर दोनों राजाओं की मित्रता और सन्धि का उल्लेख है। राजसिंह के वध के स्थान पर उसके लड़के ने मन्दिर बनवाया जहां प्रतिवर्ष मेला लगता है। इस पर्वतीय क्षेत्र में राजसिंह की वीरता के गीत अब भी स्थानीय लोगों द्वारा गाये जाते हैं और स्मृति बनाए रखी है। राजा राजसिंह चामुण्डा देवी का जो चम्बा राजाओं की युद्ध की देवी है, बहुत भक्त था। देवी ने राजा को बारह वर्ष की अधिक आयु और उसकी इच्छानुसार युद्धक्षेत्र में ही मृत्यु का वरदान दिया था। राजा ने चामुण्डा मन्दिर की मरम्मत करवाई और मन्दिर तक सीढ़ियां बनवाई। राजसिंह की मृत्यु 40 वर्ष की अवस्था में ही 7 आषाढ़ 1850 विक्रमी संवत् में हुई। उसके शरीर पर 18 घाव हुए थे।

पहले भी वर्णन है कि चुराह का इलाका आरम्भिक काल में चम्बा और बसोहली के बीच युद्ध का कारण बना रहा, कई बार चम्बा रियास्त के हाथों में आया और कई बार बसोहली के पास। बाद में युद्ध भलेई परगना तक ही सीमित रहा। 1641 ई0 में पृथ्वी सिंह ने भलेई बसोहली के राजा संग्रांम पाल को दिया। 1666 में राजा चतुरसिंह ने इसे पूर्णतया अपने अधिकार में ले लिया जबकि 1648 ई0 में मुगल हाकिम ने एक सनद द्वारा चम्बा दरबार को वापस कर दिया था। उगर सिंह के काल में 1730 ई0 में भलेई और जूहड पुनः बसोहली के पास चले गए। राजा उमेदसिंह को 1758 में पुनः यह इलाका मिल गया। परन्तु राजा जम्मू के सहायता की राजसिंह की मृत्यु के पश्चात् यह पुनः बसोहली के पास चला गया।

जीतसिंह 1794 ई0! अपने पिता राजसिंह की मृत्यु के समय अजीतसिंह की आयु केवल 19 वर्ष की थी। राजा की मृत्यु के बाद भी चम्बा की सेना ने रिहलू पर अपना आधिपत्य जारी रखा और संसारचन्द सोमा के कुछ गांवों पर ही अधिकार कर सका। राजगद्दी पर बैठने के थोड़े समय बाद ही जीतसिंह को बसोहली के साथ युद्ध में उलझना पड़ा। विजयपाल बहुधा जूहण्ड और भलेई पर आक्रमण करता और लूटपाट करता रहता था । 1800 ई0 में जीतसिंह

ने बसोहली पर आक्रमण कर दिया और उसे जीत लिया। हर्जाने के तौर पर अच्छी राशि वसूल की। बाद में बसोहली, भड्डू और रामनगर के राजाओं ने मिलकर जीतसिंह को 50,000 रूपये नज़राना दिया ताकि वह पुनः बसोहली पर आक्रमण न करें।

इन दिनों संसारचन्द अपने शक्ति बढ़ाने और दृढ़ करने में लगा था। कांगड़ा दुर्ग को जीतने के पश्चात् वह रावी और सतलुज के बीच की सारी पहाड़ी रियास्तों को जीतने में लगा रहा। उसने उनको अपने आधीन कर लिया। राजाओं को अपने दरबार में उपस्थित होने और अपनी सेना की टुकड़ियों को उसके पास भेजने के लिये बाध्य किया। बीस वर्ष तक उसका आतंक पूर्ण राज्य रहा। जो ख्याति उसके पूर्वज भी न प्राप्त कर सके थे, उसने हासिल की। किन्तु उसकी वासना बढ़ती गई और पंजाब पर भी कटोच राज्य स्थापित करने के स्वप्न लेने लगा। उन दिनों पंजाब में रणजीतसिंह की शक्ति बढ़ रही थी, वह भी अपना प्रतिद्वन्द्धी नहीं सहन कर सकता था। संसारचन्द ने दो बार द्वाबाबारी पर आक्रमण किये किन्तु मुंह की खाई । यह 1803 और 1804 की बात है। मैदानों में अपने लक्ष्य प्राप्ति से निराश हो; 1805 में वह बिलासपुर रियास्त की ओर मुड़ा और सतलुज के दाहिने किनारे का इलाका अधिकृत कर लिया। पहाड़ी राजा अधिक अपमान सहन नहीं कर सके, उन्हें अपने राज्य हाथ से चले जाने का भी भय हो गया। इसीलिये सबने मिल कर संसार चन्द के विरूद्ध संयुक्त मोर्चा बनाया। परिणामस्वरूप संसारचन्द का पतन आरम्भ हो गया। 1803 ई0 में पहले निपाल के गोरखों ने आक्रमण किया और घाघरा और सतलुज के बीच का इलाका जीत लिया। बिलासपुर की रियास्त उनके आधीन थीं। राजा बिलासपुर ने जालन्धर सर्कल की अन्य रियास्तों और बसोहली के साथ मिलकर गोरखा सेना अधिकारी अमर सिंह थापर को बुला भेजा। उसने सहर्ष निमंत्रण मान लिया। 1805 ई0 के अन्त में गोरखा सेना ने मित्र मोर्चा रियास्तों के साथ मिलकर सतलुज पार किया। यहां कांगड़ा की सेना के साथ मुठभेड़ हुई । कांगड़ा की सेना ने बड़ी वीरता के साथ सामना किया। किन्तु यह तो पहले ही कमज़ोर हो चुकी थीं। संसारचन्द ने कांगड़ा दुर्ग में आश्रय लिया। गोरखा सेना ने किला घेर लिया। चम्बा की ओर से नत्थू वज़ीर सेना लेकर सहायता के लिये गया था। संसार चन्द को बचाव की कोई आशा नहीं रही तो उसने अपने भाई फतेहचन्द को 1809 में रणजीतसिंह के पास सहायता के लिये भेजा। रणजीत सिंह ने इस शर्त पर सहायता देना स्वीकार किया कि कांगड़ा का किला उसे सौंप दिया जाएगा। संसारचन्द को यह शर्त माननी पड़ी। मई 1809 में रणजीत सिंह स्वयं सेना लेकर आया। संसारचन्द भेस बदलकर किले से निकल गया और ज्वालामुखी में रणजीत सिंह से भेंट हुई। अगस्त 1809 में गोरखा सेना और रणजीतसिंह संसारचन्द की सेनाओं का आमना-सामना हुआ। गोरखा सेना हार गई और उसे सतलुज के पार पीछे हटना पड़ा। सन्धि के अनुसार रणजीतसिंह ने कांगड़ा दुर्ग और साथ के 66 ग्रामों पर अधिकार कर लिया और शेष कांगड़ा संसारचन्द को छोड़ दिया। संसारचन्द को अब सिखों के अधीनस्थ होना पड़ा। 1809 से अन्य पहाड़ी राज्य, चम्बा सहित, लाहौर दरबार के आधीन हो गए। जीतसिंह की मृत्यु 1809 ई0 में हो गई, उस समय कांगड़ा के किले का घेरा चल रहा थ। उसका शासन

काल कठिनाई के दौर से गुज़रा। राज्य की रक्षा के लिये बड़ी सेना रखनी पड़ी। किन्तु धैर्य और बुद्धिमता से उसने व्यवस्था स्थिर रखी, जिससे राज्य पर ऋण का भार नहीं पड़ा। उसके दो पुत्र चढ़तसिंह और जोरावर सिंह थे।

चढ़तसिंह- 1808 ई0! जिस समय जीतसिंह की मृत्यु हुई तो चढ़त सिंह की आयु केवल 6 वर्ष थी। कर्मचारियों ने उसे राजगद्दी पर बिठा दिया। अव्यस्क काल में शासन की बागडोर राजमाता शारदा और नत्थू बड़ोतरा के हाथ में रही। शारदा राजमाता जम्मू की राजकुमारी थी। नत्थू तो जयसिंह के समय से वज़ीर चला आ रहा था। राजमाता बड़ी दूरदर्शिनी महिला थी। उसने राधाकृष्ण का मन्दिर बनवाया जिसका पवित्रीकरण 14 वैशाख, संवत् 1881 तदनुसार 1825 ई0 में किया गया। उसी ने सूई मन्दिर की सीढ़ियां भी बनवाई। नत्थू वज़ीर भी योग्य और शासन विद्या में निपुण था। अभी तक उसे बड़े आदर से स्मरण किया जाता है। अजीतसिंह की मृत्सु के पश्चात् सबसे महत्वपूर्ण घटना रणजीत सिंह के सम्भावित आक्रमण का भय था। जसरोटा और बसोहली के राजाओं कों आधीन कर रणजीत सिंह चम्बा की ओर बढ़ा, यह 1808-09 की बात है। जैसे तैसे उसे भारी नज़राना देकर शान्त किया गया और चम्बा आने से रोका। इस प्रकार चम्बा लाहौर दरबार के आधीन तो हो गया किन्तु आक्रमण से बचा रहा। आक्रमण से बचाव का कारण दुर्गम मार्ग के अतिरिक्त नत्थू वज़ीर की रणजीत सिंह के साथ घनिष्टता थी।

भद्रवाह की छोटी सी रियास्त चम्बा के आधीन चल रही थी। उस समय इसका राजा दयापाल भीतरी झगड़ों के कारण रियास्त छोड़ भाग गया और उसने दीना नगर में शरण ली। उसका भतीजा पहाड़चन्द राजा बना। उसने 1820 ई0 से चम्बा को कर देना बन्द कर दिया। नत्थू वज़ीर उसके विरूद्ध सेना लेकर गया किन्तु पधरी के जोत के पास हार हो गई। नत्थू रणजीत सिंह के पास पहुंचा और वहां से सनद और सेना को साथ लेकर उसने दुबारा 1821 ई0 में भद्रवाह पर चढ़ाई कर दी। राजा भद्रवाह मुकाबला न कर सकने के कारण भाग गया। तत्पश्चात् भद्रवाह को चम्बा के साथ मिला लिया गया और वहां चम्बा के कर्मचारी नियुक्त किये गए।

1821 ई0 में देसा सिंह मजीठा ने रणजीत सिंह के नाम पर रिहलू की मांग की, इसे कांगड़ा करदारी का एक भाग माना जाता था। किला को घेरे में ले लिया गया। नत्थू वज़ीर ने रिहलू किलादार को आदेश भेजा कि वह किला की रक्षा में डटा रहे। स्वयं वह लाहौर चला गया ताकि महाराजा से बात कर ले। युद्ध के परिणाम के भय से राजमाता ने रिहलू के किला को सुपुर्द करने का आदेश दे दिया। इस प्रकार यह किला चम्बा के हाथ से निकल गया। नत्थू किला को लेने में तो सफल नहीं हो सका किन्तु रानीताल की छोटी सी जागीर जो रिहलू के अनतर्गत परम्परा से चम्बा की रानियों को मिली थी, को छुड़ा पाने में सफल रहा। 1821 में रणजीत सिंह ने भद्रवाह के लिये सनद जारी कर दी। बाद में यह सनद चम्बा के बड़े काम आई जब चम्बा रियास्त टूटने और जम्मू में मिलने से बच गई।

1815 में चढ़त सिंह के साले बीरसिंह को जो नूरपुर का राजा था, नूरपुर से रणजीतसिंह

ने निकाल दिया। वह चम्बा की ओर भाग आया। अपनी रियास्त वापस लेने का उसने प्रयास किया, सेना इकट्ठी की किन्तु हार गया और ब्रिटिश राज्य में शरण ली। 1826 में वह पुनः नूरपुर वापस गया। उसकी प्रजा उसके गिर्द इकट्ठी हो गई। किन्तु सिख सेना के आने पर वह पुनः चम्बा की ओर भाग गया। चढ़त सिंह पर उसे हवाले करने के लिये दबाव पड़ा तो उसे कैद कर लिया गया और गोबिन्द गढ़ के किले में नज़रबन्द कर दिया। राजा चढ़त सिंह ने 85,000 रूपये देकर उसे छुड़ा लिया। 1846 में उसकी मृत्यु नूरपुर में हो गई जब वह पुनः अपना राज्य छुड़ाने में प्रयासरत था।

1820 ई० में पाडर में राज्य के मुखिया रत्लू ने जस्कर पर चढ़ाई कर दी, उसे चम्बा के आधीन कर लिया गया। उस समय तक राजा पाडर लद्दाख के आधीन होता था। बाद में पाडर और ज़स्कर चम्बा से स्वतंत्र हो गए।

1835 ई० में जम्मू के महाराजा गुलाब सिंह ने अपने योग्य मंत्री-सेनापति जोरावर सिंह के साथ लद्दाख पर आक्रमण करने के लिये सेना भेजी और उसे जीत कर अपने राज्य में शामिल कर लिया। सेना की एक टुकड़ी वज़ीर लखपत सिंह के आधीन जंस्कर गई। इस सेना की टुकड़ी ने उमसी जोत को लांघकर जंस्कर जीतते हुए पाड़र के मार्ग से जम्मू को प्रस्थान किया। गुलाबसिंह का पाडर को जीतने का कोई विचार न था। किन्तु पाडर के लोगों ने विरोध किया और डोगरा सेना के मार्ग में रुकावटें डालीं । जाते हुए लखपतसिंह ने बीस सिपाही चतरगढ़ में छोड़ दिये। चम्बा के मुख्य एहलकार रत्लू ने लोगों को भड़काया और सिपाहियों को पकड़ कर चम्बा भेज दिया। चढ़त सिंह ने अपने कर्मचारी के कृत्य की निन्दा की किन्तु शरारत तो हो चुकी थी। 1836 ई० में जोरावर सिंह स्वयं बड़ी सेना लेकर अपमान का बदला लेने के लिये आया। रत्लू ने चन्द्रभागा का पुल तोड़ डाला, इस प्रकार डोगरा सेना को तीन मास तक रोक रखा। ज़ोरावरसिंह ने कुछ मील नीचे ग्रामवासियों की सहातया से झूला डलवाया और रात के अन्धेरे में सेना का एक भाग दूसरी ओर भेज दिया जो कि भुटना नाला के पुल पर से होकर चतरगढ़ पहुंच गया। चतरगढ़ को मिट्टी में मिला दिया गया और उसका नाम बदल कर गुलाबगढ़ रखा। पाडर के बहुत सारे लोगों को फांसी पर लटका दिया गया या अंगहीन कर दिया। पाडर के जम्मू राज्य में मिला दिया। पाडर में 1880 में नीलम की खान मिली जो जम्मू राज्य के लिये आय का साधन बनी। रत्लू, जिसके कारण यह गड़बढ़ हुई थी, चम्बा को भाग गया किन्तु उसे पकड़ कर जम्मू भेज दिया जहां वह कई वर्ष तक कैद रहा। बाद में जब उसे छोड़ा तो किश्तवाड़ में एक छोटी सी जागीर दे दी।

1836 ई० में ज़ोरावरसिंह के आधीन एक सेना भद्रवाह जीतने को भेजी किन्तु चम्बा की सेना ने किला को बड़ी वीरता से रक्षा कीं चम्बा से और भी सेना भेजी गई, इसलिए डोगरा सेना वापस चली गई।

वज़ीर नत्थू की 1838 में मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु से रियास्त को बड़ा धक्का लगा। उसने 40 वर्ष से अधिक समय तक रियास्त की बड़ी ईमानदारी और बुद्धिमत्ता से सेवा की थी। महाराजा रणजीत सिंह उसका बहुत मान करता था। 1814 के कश्मीर के आक्रमण के

समय जिसमें सिखों को बड़ी हानि उठानी पड़ी थी, उसने महाराजा की बड़ी सेवा की थी। महाराजा रणजीत सिंह पर नत्थू वज़ीर का निजी प्रभाव चम्बा राज्य के लिये कई बार बड़ा लाभकारी रहा। इसके उपरान्त बड़ोतरा परिवार से ही बाघा वज़ीर नियुक्त हुए। 1839 में चम्बा में लार्ड कनिंघम आया जो पहला योरूपीय था जिसने रियास्त के, राजधानी के और भरभौर के पुरातत्व विष्य में लिखा और जांच की।

चढ़त सिंह दो अढ़ाई वर्ष तक घातव्याधि का रोगी रहा। 1844 में उसका देहान्त हो गया, उस समय उसकी आयु केवल 42 वर्ष थी। 36 वर्ष तक उसने राज्य किया। उसके साथ दो रानियां और छ' खवासे (उप-पत्नी) सती हो गई। चम्बा में यह सती की रस्म अन्तिम थी। उसके तीन पुत्र श्रीसिंह, गोपालसिंह और सुचेत सिंह थे जो आयु में छोटे थे।

श्रीसिंह 1844! श्री सिंह की आयु उस समय केवल 5 वर्ष थी जब उसे गद्दी पर बिठाया। शासन की बागडोर उसकी माता, जो कटोचवंश की राजकुमारी थी, और बाधा वज़ीर के हाथ रही। अव्यस्क राजा के चाचा ज़ोरावरसिंह की नियत पर सन्देह होने लगा तो राजमाता ने उसे पकड़ कर जेल में डालने का प्रयास किया किन्तु वह भाग गया। राजधानी में कुछ गड़बड़ हुई किन्तु उसे लोगों से सहायता नहीं मिल सकी। इसलिए वह भद्रवाह भाग गया क्योंकि उसे भद्रवाह राजा की नाम मात्र की उपाधि प्राप्त थी। वहां से वह जम्मू चला गया और 1845 में मृत्यु हो गई। 1845 ई0 में गुलाब सिंह ने भद्रवाह को जम्मू के साथ मिला लिया।

श्री सिंह के राज्यकाल में एक घटना हुई। लकड़शाह नाम का बसोहली का एक ब्राह्मण राज्य सेवा में था। वह जहला पंडित का सम्बन्धी था। इसकी और जम्मू के ध्यानसिंह के भाई हीरासिंह की लाहौर दरबार में बड़ी पहुंच थी। यह सिख दरबार के प्रतिनिधि के तौर पर चम्बा में काम करता रहा। चम्बा शासन में इसने इतना प्रभाव प्राप्त कर लिया था कि राज्य का वास्तविक अधिकारी बन बैठा। इसने लकड़शाही सिक्का नाम से अपना ताम्र सिक्का प्रचलित कर दिया। इतना स्वेच्छाचारी और अभिमानी हो गया कि अन्य राज्य कर्मचारी तंग आ गए। उन्होंने उसे चलता करने की राजमाता के साथ योजना बनाई। तदनुसार उसे पकड़ और बान्ध कर साहो के मार्ग से बेलज ले गए और वहां उसे मार डाला। बाधा वज़ीर और दो अन्य कर्मचारी लाहौर हीरासिंह को शान्त करने के लिये गए किन्तु जल्ला पंडित ने उन्हें जेल में डलवा दिया। लाहौर से चम्बा पर आक्रमण के लिए सेना भेजी गई जिसका एक भाग चूहन-सन्धारा से होता हुआ चम्बा पहुंचा। रानी श्री सिंह को लेकर वस्सू भाग गई। सिखों ने चम्बा नगर को खूब लूटा। सेना का दूसरा भाग नूरपुर के मार्ग से बढ़ा किन्तु तारागढ़ में नियुक्त चम्बा के सैनिकों ने उन्हें रोक लिया और जज़री से आगे नहीं बढ़ने दिया। सिख सेना ने कोटला से गणेश गढ़ ले लिया। तभी यह समाचार आ गया कि लाहौर के सैनिकों ने जहल्ला पंडित और हीरासिंह को कत्ल कर दिया। तुरन्त सिख सेना वापस चली गई। बाधा वज़ीर और उसके साथियों को मुक्त कर दिया और वह चम्बा लौट आए।

रणजीत सिंह की मौत के बाद पंजाब में बद अमनी फैल गई। 1845 में पहला सिख युद्ध प्रारम्भ हुआ जिसके कारण लाहौर दरबार को बड़ी हानि पहुंची। इस युद्ध के अन्त में

जो सन्धि हुई उसके अनुसार द्वाबा जालन्धर, ब्यास और सतलुज के बीच की पहाड़ी रियास्तें अंग्रेज़ी शासन के आधीन हो गई। डेढ़ करोड़ रूपया युद्ध के हर्जाना के तौर पर देना पड़ा। सिख दरबार इतनी राशि देने में असमर्थ था। उस के बदले में ब्यास और सिन्ध के बीच का पहाड़ी इलाका और 50 लाख रूपये देना स्वीकार किया। यह सन्धि 9 मार्च, 1846 को सम्पन्न हुई । उसी वर्ष 16 मार्च को जम्मू राजा गुलाब सिंह और अंग्रेज सरकार के बीच दूसरी सन्धि हुई जिसके द्वारा रावी और सिन्ध के बीच का सारा पहाड़ी इलाका जिस में चम्बा भी शामिल था, साढ़े सात लाख पौण्ड के बदले में देना स्वीकार किया। यह सन्धि दुबारा की गई जिसके द्वारा गुलाब सिंह ने बदले में देना स्वीकार किया। यह सन्धि दुबारा की गई जिसके द्वारा गुलाब सिंह ने रावी घाटी के दक्षिणी भाग के बदले में लखनपुर का ताल्लुका प्राप्त किया, चम्बा ने भद्रवाह पर अपना अधिकार, जिसकी पुष्टि सनद द्वारा महाराजा रणजीत सिंह ने की थी, छोड़ दिया। रावी के पूर्व का सारा इलाका चम्बा रियास्त के पास रहा। इस प्रकार रियास्त की पुरानी सीमा सुरक्षित रही। बाधा वज़ीर की राजभक्ति और चतुराई के कारण रियास्त दुर्दैव से बच गई, वह तुरन्त लाहौर चला गया था और सर हैनरी लारेन्स के सामने सारे तथ्य रखे। इस प्रकार उसकी सहानुभूति प्राप्त कर रियास्त को बचा लिया। भद्रवाह जरूर राज्य का भाग न रहा, शेष राज्य पूर्णरूप से बच गया। रियास्त से 12000रूपये वार्षिक कर निश्चित हुआ और चम्बा अंग्रेजों के आधिपत्य में चला गया। 6 अप्रेल, 1846 को राजा श्रीसिंह को एक सनद दी गई जिस के द्वारा चम्बा राज्य उसे सौंपा गया। एक शर्त उसमें यह थी कि यदि राजा के पुरूष सन्तान न हो तो राज्य जीवित भाई को मिलेगा। 11 मार्च, 1862 को दूसरी सनद द्वारा राजा को उत्तराधिकारी गोद लेने का अधिकार प्राप्त हो गया, यदि सीधा उत्तराधिकारी न हो तो।

1851 में ब्रिटिश सरकार ने रियास्त के शासक से योरूपियन के लिये स्वास्थ्य स्थान बनाने के लिये स्थान लेने की बात की। लार्ड नेपियर ने धौलाधार के पश्चिमी किनारे पर स्थान का चयन कर लिया। 1858 में कुछ पहाड़ी स्थान कालाटोप, पीतराई, टिहरा, बकरोटा, भंगोड़ को अंग्रेज़ी सरकार को स्थानान्तरित किया गया और उसके बदले में केवल 2000 रूपये वार्षिक कर की छूट दी गई। इस सैनिटोरियम का नाम डलहौज़ी रखा गया। 1866 में बहलून की पहाड़ी भी ब्रिटिश सेना के डिपो के लिये ले ली गई और साथ ही बकलोह की पहाड़ी गोरखा छावनी के लिये ली। इन के कारण 5000 रूपये और अधिक कर में छूट दी गई और भी कुछ जमीन स्थानान्तरित करने के कारण जो कर में छूट मिली, उससे रियास्त का कर 12000 से केवल 2008 रूपये रह गया। स्वतन्त्रता संग्राम के दिनों में राजा श्री सिंह अंग्रेज़ो का वफादार बना रहा और यथाशक्ति सहायता की। मियां अवतार सिंह के अधीन डलहौज़ी को सैनिक टुकड़ी भेजी और सीमा पर स्वतन्त्रता सेनानियों के विरूद्ध बड़ी चौकसी रखी, जो पकड़े गए उन्हें अंग्रेजों के हवाले कर दिया।

बाधा वज़ीर 1854 में सेवानिवृत्त हो गया। उसका स्थान बिल्लू वज़ीर ने लिया, वह भी बड़ोतरा वंश से था, वह 1860 तक वजीर रहा। 1 दिसम्बर, 1862 में दरबार में एक अंग्रेज़

सुपरिण्टैण्डेण्ट भेजा गया और कुछ समय तक वज़ीर का पद रिक्त रहा।

श्री सिंह की अल्पव्यसकता के दौरान शासन में ढिलाई रही। जब वह व्यस्क हुआ और राज्य की बागडोर अपने हाथों में ली तो व्यवस्था में उसे कठिनाई आई उसका विवाह सुकेत की राजकुमारी के साथ हुआ, उसके साथ जो कर्मचारी आए, वही शासक बन बैठे। चम्बा के कर्मचारी उनके सामने टिक नहीं पाए। रियास्त को कर से आय घटकर एक लाख रूपये रह गई। सिखों के कर भार के कारण राज्य ऋणी हो गया था। जब श्रीचन्द को शासन व्यवस्था में कठिनाई अनुभव हुई तो उसने अंग्रेज एजेन्ट से एक अंग्रेज अफसर की सेवाएं मांगी। मेजर बलेयर रीड को जनवरी 1863 में सुपरिण्टैण्ड नियुक्त किया गया। थोड़े ही समय में उसने प्रभावी और दूरगामी सुधार किये। दरबार में व्यर्थ के कर्मचारियों को निकाल दिया। पूर्विया और पठान सैनिकों को पिछला वेतन देकर छुट्टी दे दी। जो पुराने ऋण थे, वह ऋण मुक्त कर दिये और राज्य की आय व्यवस्था की दृढ़ नींव डाली। तारागढ़, गणेशगढ़ और पृथ्वी जोड़ के किले में जो सैनिक नियुक्त थे, उनकी भी छटनी कर किले को स्थानीय कारदारों के सुपुर्द किया।

मेजर रीड ने राज्य के भीतरी आय साधनों में विकास किया। पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण सड़कों का अभाव था। एक सार्वजनिक निर्माण विभाग की योजना बनाई और उसका सुपरिण्टैण्ड एक अंग्रेज नियुक्त किया। कई सड़कों का सर्वेक्षण करवाया और जैसे जैसे साधन जुटते गए, सड़कों का निर्माण प्रारम्भ किया यहां तक कि पांगी जैसे दूरस्थ और दुर्गम इलाका का जंगलात विभाग द्वारा सड़कों का सुधार किया। 1863 में चम्बा में प्राथमिक विद्यालय खोला, इसी वर्ष डाकखाना भी खोला, डल्हौज़ी के लिये दैनिक डाक प्रबन्ध किया गया।

मेजर रीड ने जंगलात के प्रबन्ध के महत्व को राजा को समझाया और अनुरोधपूर्वक 864 में राज्य के जंगलों को ब्रिटिश सरकार को एक लीज़ (समेंम) द्वारा 22.000 रूपये वार्षिक ाशि के उपलक्ष में सौंप दिया। इस प्रकार एक सन्धि द्वारा चम्बा के जंगलात 99 वर्ष के िये इम्पीरियल फारेस्ट डिपार्टमैण्ट के आधीन चले गए। हर 20 वर्ष के पश्चात् इस लीज़ ा नवीनीकरण किया जाता रहा। जनवरी, 1865 में मेजर रीड के स्थान कैप्टन फोर्बस आया ौर उसी वर्ष रैज़ीडैन्सी भवन बना। 1866 में चम्बा हस्तपाल की नींव रखी गई। 1869 ई0 डल्हौज़ी चम्बा के बीच दो नई सड़के कोल्हड़ी और खज्यार से होती हुई बनवाई गई। खज्यार, ल्हौज़ी और चम्बा में डाक बंगले बनवाए गए। 1870 ई0 में जन्दरी घाट में राजा का निवास थान बनाया गया। एक स्थिर और दृढ़ शासन के कारण रियास्त में खुशहाली आने लगी। यास्त की आय बढ़कर 1870 ई0 में 1,78,000 रुपये हो गई। कोई कर नहीं बढ़ाया गया ल्कि छोटे छोटे कर जैसे विवाह पर, व्यापारियों पर बन्द कर दिये गए। केवल नगर की चुंगी र पुल का कर रह गए। सुरक्षा व्यवस्था और नई सड़कों के निर्माण से व्यापार बढ़ा और शहाली बढ़ी।

11 जून, 1870 को राजा श्रीसिंह की मृत्यु थोड़ा समय बीमार रहने पर हो गई। जा श्री चन्द ज्यादा पढ़ा लिखा नहीं था किन्तु बड़ा बुद्धिमान और समझदार शासक था,

उदार और मिलनसार था। इसलिये लोग उसे प्यार करते थे। राजा का इकलौता लड़का छोट आयु में ही काल का ग्रास हो गया और लड़की महाराजा जम्मू को ब्याह दी गई।

गोपाल सिंह 1870 ई0! राजा श्रीसिंह का भाई राज्य का उत्तराधिकारी बना। री ने 25, अक्तूबार, 1870 को इसकी घोषणा दरबार करके कर दी। श्री सुचेत सिंह चम्बा चला गया और अपने गद्दी के अधिकार के लिये लन्दन में जाकर लड़ता रहा, 1896 में लन्द में ही उसकी मृत्यु हो गई। कर्नल रीड गोपाल सिंह के राजनयिक परामर्शदाता थे। जो सु ार राजा श्री चन्द के आरम्भ हुए थे, वह कार्यान्वित हुए। इनसे राज्य की आय बढ़ती गई कई नई सड़कों का निर्माण हुआ। राजधानी में भी विकास कार्य किए गए। प्राथमिक स्कू को 1871 में मिडल स्कूल बनाया गया। 13 नवम्बार, 1875 को हिन्दुस्तान का गवर्नर जनर लार्ड मयो चम्बा आया। जनवरी, 1872 में कर्नल रीड के स्थान पर कर्नल जी0 ए0 एण्ड्र आए। 1873 में राजा गोपाल सिंह ने अपने बड़े लड़के टिक्का शग्म सिंह के हक में गद्दी छो दी। उस समय शाम सिंह की आयु केवल 7 वर्ष थी। राजा गोपाल सिंह को मंजीर में ए जागीर और पेन्शन गुज़ारा के लिये दे दी गई। मंजीर में ही मार्च, 1895 में उनकी मृत्यु ह गई।

राजा शाम सिंह- 1873 ई0! राजा गोपालसिंह के तीन लड़के थे- शाम सिंह, भू सिंह और प्रताप सिंह। 17 अक्तूबर 1873 को शाम सिंह को राजगद्दी पर बिठाया गया औ मियां अवतार सिंह को वज़ीर नियुक्त किया गया। चूंकि शाम सिंह अव्यस्क था, इसलिए वज़ी और कर्नल रीड को शासन की सारी जिम्मेवारी सौंपी गई युवा राजा की शिक्षा का प्रबन् किया गया। मार्च 1875 में राजा शाम सिंह दिल्ली दरबार में उपस्थित हुआ। 1876 में प्रिं आफ वेल्स से मिलने गया। पहली जनवरी, 1877 को दिल्ली में दरबार में भाग लिया। रा की आय में वृद्धि होकर दो लाख हो गई। 1876 ई0 में कर्नल रीड ने ज़मीन का बन्दोब करवाया, इससे कर व्यवस्था में सुधार हुआ। चम्बा की गणना पंजाब की समृद्ध रियास्तों होने लगी। कर्नल रीड मार्च 1877 में सेवानिवृत्त हो गए। उसके पश्चात् आ0 टी0 बर्नी राजनैति परामर्शदाता नियुक्त हुआ और जोहन हर्वे राजा का शिक्षक नियुक्त हुआ। राजा ने पढ़ाइ साथ खेलों में भी प्रवीणता प्राप्त की 1 अक्तूबर 1879 में मिस्टर बर्नी के स्थान पर कैप् एच0 टी0 मार्शल नियुक्त हुआं उसने नया दरबार हॉल बनवाया। 1881 में तीसा में दवाईखा खोला। फरवरी, 1883 में राजा शामसिंह का विवाह महाराजा जम्मू-कश्मीर की पोती के स हो गया। 20 वर्ष पूरा होने पर जंगलात का लीज़ का 1884 में पुनः समालोचना की गई अ अंग्रेज सरकार ने लाभ का दो तिहाई भाग देना स्वीकार कर लिया। अब राज्य की आय अ लाख हो गई। जुलाई, 1884 में शामसिंह व्यस्क हुआ तो अक्तूबर में राजगद्दी पर बिठा गया और राजा के सारे अधिकार सौंप दिये। दीवान गोविन्द चन्द को वज़ीर बनाया गया राजा ने अपने कर्तव्यों को पूरे उत्तरदायित्व और लग्न से निभाना शुरू किया।

1887 में इम्पीरियल पोस्टल सिस्टम के साथ चम्बा डाक प्रबन्ध का सीधा सम्ब स्थापित किया गया और डाकखाना के काम का फैलाव हुआ। कुछ अन्य स्थानों पर भी ड

र खोले गए। डाक पर एक विशेष डक सरचार्ज टिकट आरम्भ किया जो राज्य की आय ा साधन बना। ब्रिटिश पद्धति से न्याय विभाग का पुननिर्माण किया गया। इस प्रकार दीवानी र अपराधिक अपीलें पहले वज़ीर के पास और फिर राजा के पास जाने लगी पुलिस विभाग ी भी व्यवस्था की। पुलिस कर्मचारियों की संख्या बढ़ा कर सौ कर दी और कोतवाल विभाग ा अधिकारी नियुक्त किया। 1891 में वर्तमान शामसिंह हस्पताल बनवाया और इसमें रोगियों लिए 40 बिस्तरों का प्रबन्ध किया गया। एक छोटी स्थायी सैनिक कम्पनी स्थापित की जिसमें तीन सौ जवान, 30 घुड़सवार और चार तोपें रखीं। कचहरी, डाकखाना, कोतवाली, पताल और जेल की इमारतें बनाई गई। चम्बा चौगान को समतल किया और इसका क्षेत्र ाया जिससे नगर की सुन्दरता बढ़ी। चौगान के दोनों ओर मुख्य बाज़ार की दुकाने बनवाई। ने राजप्रसाद की मरम्मत करवाई गई और महल का बड़ा भाग नया बनवाया।

1894 में रावी का तारों का पुल बाढ़ के कारण क्षतिग्रस्त हो गया। 1895 में एक ख रुपये की लागत से लोहे का झूले का पुल बनवाया। 1895 में भटियात बज़ारत में भूमि ार के लिये आन्दोलन शुरु हुआ। किसानों ने मालिया देना बन्द कर दिया, सरकारी काम लिये मज़दूर नहीं मिलते थे और सरकारी कर्मचारी लगान की वसूली नहीं करते थे। लाहौर कमिश्नर ने शिकायतों की छानबीन की, किन्तु उन्हें शिकायतों का विशेष आधार नहीं ा। आन्दोलन के सरगनों को पकड़कर सज़ा दी गई। इस प्रकार आन्दोलन समाप्त हो । 1996 में वज़ीर गोविन्द चन्द पदमुक्त हो गए और उसके स्थान पर छोटे कँवर भूरीसिंह वज़ीर बनाया गया। दोनो भाइयों में बड़ा प्यार था, वज़ीर नियुक्त होने से पहले भूरी सिंह शाम सिंह के प्राइवेट सैक्रटरी के तौर पर कार्यरत रहा, इसलिये वह राजकाज से भलीभान्ति चित था। उसके वजीर बनने पर सारी जनता बड़ी प्रसन्न हुई। सितम्बर, 1900 में हिन्दुस्तान वायसराय लार्ड कर्जन और लेडी कर्ज़न चम्बा आए और एक सप्ताह यहां ठहरे। 1902 जाब के लै0 गवर्नर सर मैकबर्थ यंग चम्बा आया। 1902 तक रियास्त की आय बढ़ कर लाख रुपये हो गई थी।

1902 में राजा शामसिंह सख्त बीमार हो गए। कुछ स्वस्थ होने पर राजा ने एक पत्र ब्रिटिश सरकार को लिखा कि वह अपने भाई भूरीसिंह के पक्ष में राजगद्दी छोड़ना ता है। जनवरी 1904 में लाहौर के कमिश्नर ने इस आशय की घोषणा कर दी। 10 जून, को शाम सिंह की अचानक मृत्यु हो गई जबकि उनकी आयु केवल 39 वर्ष थी।

भूरी सिंह- मई 1904 ई0 में सरचार्लस रिवाज़ के0 सी0 एस0 आई लै0 गवर्नर पंजाब ी रसमों के साथ भूरी सिंह सी0 आई0 ई0 को चम्बा राजसिंहासन पर बिठाया । सात तक भूरी सिंह ने राजा शाम सिंह के वज़ीर के तौर पर बड़ी योग्यता से निभाया था। श सरकार भी प्रसन्न थी। 1902 में उसकी शासन योग्यता से प्रसन्न होकर सी0 आई0 .I.E. CHAMPIONSHIP OF INDIAN EMPRISE) की उपाधि दी। राजा भूरी सिंह सुसभ्य, सुसंस्कृत, न्यायप्रिय और अनुभवी शासक थे। उन्हें रियास्त की पूरी जानकारी थी।

राजा भूरी सिंह ने सड़कों, यातायात के साधनों को बढ़ाने, विश्राम गृह बनाने में

विशेष रुचि दिखाई। पहली जनवरी, 1906 को ब्रिटिश सम्राट ने राजा भूरी सिंह Knighthood in the Most Exalted Order of the Star of India की उपाधि दी। में दो गैस्ट हाऊस, चम्बा क्लब, वाचनालय और पुस्तकालय बनवाये।

1908 में जंगलाता का लीज़ समाप्त करने के लिये ब्रिटिश सरकार से पत्र व्यव किया, परिणामस्वरूप जंगलों का प्रबन्ध रियास्त के अपने हाथ में आ गया। 1910 में के लिये पानी की व्यवस्था की, जिससे लोगों को बड़ी सुविधा हो गई। इसी वर्ष बिजली बनाकर नगर में बिजली की आपूर्ति की। 1914 में प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ होने पर ने अपनी सेवाएं और रियास्त के साधनों को सरकार को समर्पित किया। राजा के योग्य शा में रियास्त ने बड़ी उन्नति की। रियास्त की आय सात लाख रुपये हो गई। लोग प्रसन्न खुशहाल थे।

18 सितम्बर, 1919 को जब राजा कचहरी में काम कर रहे थे, दिमाग से रक्त का आक्रमण हुआ, चार दिन की बीमारी से ही शरीरान्त हो गया। राजा भूरीसिंह के दो रामसिंह और केसरी सिंह थे। रामसिंह राजगद्दी का उत्तराधिकारी था। दो राजकुमारियां बड़ी राजकुमारी कुटलहर के टिक्का बृजमोहन पाल को ब्याही गई और छोटी जम्मू-कश्मी महाराज हरीसिंह को ब्याही गई।

राजा रामसिंह - 1919 ई0! राजा रामसिंह को मार्च 1920 में पंजाब के गव गद्दी पर बिठाया ।श्री माधोराम (राय बहादुर) को उनका प्राइवेट सैक्रटरी नियुक्त किया में उसे चीफ सैक्रटरी के लिये पदोन्नत किया। राजा भूरीसिंह के काल में उसे विशेष दी गई थी। राजा के परामर्शदाता के तौर पर कर्नल थामस रिटायर्ड कमिश्नर नियुक्त कुछ समय पश्चात् राजा के भाई केसरीसिंह को वज़ीर नियुक्त किया गया। राजा रामसिं छोटी आयु में म्ण्डण ।जापदेवद द्वारा शिक्षा दी गई, तत्पश्चात् बैपर्मो ब्वससमहम लाहौर में पूरी करने पर देहरादून सैनिक स्कूल में सैनिक शिक्षा के लिये भेजा था। राजा भूरी शासन के सभी विभाग भलीभान्ति संगठित कर दिये थे, इसलिये राजा रामसिंह के सामने कठिनाई नहीं आई। 1 नवम्बर 1921 से रियास्त चम्बा भारत सरकार के राजनैतिक के सीधे आधीन हो गई।

8-12-1924 को टिक्का लक्ष्मण सिंह का जन्म हुआ। रियास्त की आय बढ़ लाख रुपये वार्षिक हो गई। राजगद्दी पर बैठने के पश्चात् राजा रामसिंह ने शिक्षा की विशेष ध्यान दिया। पन्द्रह ग्राम स्कूल खोले गए। चम्बा नगर के स्कूल को हाई स्कूल ब योग्य विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति और वार्षिक पारितोषक दिये जाने लगे । शारीरिक शि ओर भी ध्यान दिया। चम्बा नूरपुर सड़क का पुनः निर्माण किया, चक्की पर तारों का पुल ब चम्बा-भरभौर सड़क को खनी तक पूरा कर रावी पर पुल निर्माण किया, जिससे भर जनता को बड़ा लाभ हुआ। चम्बा नगर में बिजली और पानी की पूर्ति के लिये अच्छी व्यय की। सड़कों पर बिजली के खम्भे लगवाए और नगर में सफाई के लिये नालियां ब पानी के लिये एक जलाशय बनवाया। एक नये बिजली घर का काम प्रारम्भ करवाया।

ामस एडवाइजर के बाद क्रम से मेजर फील्ड, मेजर बैल, हागसन और कर्नल कोल्डस्ट्रीम आए। राज्य के भीतरी भागों में चिकित्सा प्रबन्ध किये। राजा रामसिंह का 17 दिसम्बर, 1935 ो लाहौर में 45 वर्ष की आयु में देहान्त हो गया।

इन के राज्यकाल में एक राजनैतिक आन्दोलन चीफ सैक्रटरी दीवान बहादुर माधो म के विरोध में काफी जोर पकड़ गया। इस आन्दोलन में नगर के कई प्रतिष्ठित नागरिक ामिल थे, जो माधो राम की दमन-नीति, विशेषतया सुशिक्षित वर्ग के प्रति, के विरुद्ध कुछ र्ष चली। राजा रामसिंह की आन्दोलनकारियों के प्रति सहानुभूति थी, किन्तु चीफ सैक्रटरी ो पोलीटिकल एजेण्ट की सहायता और सहयोग प्राप्त थे।

दूसरा आन्दोलन धार्मिक, सामाजिक था। आर्य समाज की स्थापना हो चुकी थी। 0 रामशरण जो पहले हाई स्कूल में फारसी के अध्यापक थे, ने हिन्दू समाज के एक हाली-चन्नाल ाम के अछूत समुदाय को, आर्य समाज में दीक्षित कर उन्हें शिक्षित, संस्कारित कर एक बड़ा माज सुधार का आन्दोलन चलाया। स्वयं नौकरी को तिलांजलि दे सारा समय आर्य समाज प्रचार और समाज सुधार को अर्पित किया। उच्च वर्ग ने उनका बड़ा विरोध किया, किन्तु त्र के पक्के पं0 रामशरण ने अपने कार्य में सफलता प्राप्त की। हिन्दी-संस्कृत शिक्षा, विशेषतया हिला शिक्षा पर बड़ा बल दिया।

### जा लक्ष्मण सिंह 1935 ई0

राजा लक्ष्मण सिंह अपने पिता राजा रामसिंह की मृत्यु के समय अव्यस्क था, इस ये भारत सरकार के पोलीटिकल विभाग ने अव्यस्क काल के लिये कौंसिल आफ डमिनिस्ट्रेशन (राज्य शासन परिषद) नियुक्त कर दी, अध्यक्ष सहित जिसके तीन सदस्य थें। हला अध्यक्ष मेजर टूलमिन था जो कि अन्तिम एडवाइज़र था। शासन प्रबन्ध में आधुनिक धार लाए थे, तदनुसार नियमित रूप से वार्षिक बजट बनने लगा। रियास्त के भीतरी भागों शिक्षा, चिकित्सा, स्थानीय शासन के आधुनिकीकरण की ओर तेज़ी से अग्रसर हुए। चम्बा पठानकोट के साथ मिलाने के लिये कार्ट रोड योजना बनाई गई। 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध रम्भ हुआ, उसमें रियास्त ने सक्रिय योगदान दिया। एक लाख नौ हज़ार नौ सौ बानवे रुपये राशि सहायता कोश में दी और 889 सैनिक रिक्रूट दिये। 1944-45 आर्थिक वर्ष में राज्य आय सत्रह लाख से अधिक हो गई। टूलमिन के पश्चात् कौंसिल के अध्यक्ष कर्नल स्ट्रौंग और दीवान बहादुर माधो राम उप-प्रधान बनें। 1941 में मिस्टर स्लैटरी अध्यक्ष बने। 1943 आरम्भ में कौंसिल में एक राजनैतिक परिवर्तन लाया गया। कौंसिल का एक सदस्य रा0 0 रघुवीर सिंह, पंजाब के रिटायर्ड रैवेन्यू अफसर, को रैवेन्यू मेम्बर के तौर पर नियुक्त किया ा। 1946 में मिस्टर स्लैटरी के जाने के पश्चात् मिस्टर शैट्टक अध्यक्ष हुए, इसका सम्बन्ध ाब के खुफिया विभाग से था। 1945 में राजा लक्ष्मण सिंह व्यस्क हुए तो उन्हें नियमित प से गद्दी पर बिठा दिया गया।

विलीनीकरण 15 अगस्त, 1947 को भारत वर्ष स्वतंत्र हो गया। पहिले जो ब्रिटिश ण्डया कहलाता था, भारत हो गया। राजाओं की रियास्तों की स्थिति डावाँडोल थी। परिणाम ही निकलना था कि सब रियास्तों का मुख्य राजनैतिक धारा में विलीनीकरण हों सर वी0

पी0 मैनन ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि “शासन परिवर्तन के पश्चात् कुछ रियास्त अधिक अधिकारों और उत्तरदायित्वपूर्ण राज्य के लिये संघर्ष चला शासक इस आन्दोलन नियंत्रण करने या भविष्य के लिये कोई योजना बद्ध कार्यक्रम बनाने की स्थिति में नहीं जब यह संकट प्रारम्भ हुआ तो सुकेत और बालसन के राजाओं ने अपनी रियास्तों का प्र भारत सरकार को सौंप दिया । चम्बा में भारत सरकार को राजा को पुलिस और सेना सहायता देने के लिये तैयार रहना पड़ा बाद में एक अधिकारी बतौर दीवान नियुक्त कि इन रियास्तों को पूर्वी पंजाब के साथ मिलने की मांग थी किन्तु जनता और राजा दोन इसका घोर विरोध किया। राजाओं का कहना था ओर ठीक भी था कि इन पहाड़ी इल के लोगों की भाषा, रीति, रिवाज, रहन-सहन पंजाब के मैदानी इलाकों के लोगों से भिन्न पूर्वी पंजाब के विभाजन के कारण पहिले ही काफी कठिनाइयों का सामना है। इन प रियास्तों के सामने बड़ी समस्या लोगों की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति, सड़कों का नि और जंगल की पैदावार का उपयोग था। ऐसी स्थिति में ये रियास्तें किसी प्रान्त के लिये बन जाती। मैंने इन राजाओं का एक सम्मेलन 2 मार्च, 1948 को दिल्ली में बुलाया। उ पहिले ही आपस में परामर्श करके अपनी रियास्तों का यूनियन में सौराष्ट्र के मॉडल पर संग करने की एक अस्थायी योजना बनाई थी। इन के सुझाव को कुछ लोक प्रिय नेताओं समर्थन प्राप्त था। मैंने कहा कि इन रियास्तों के युनियन का जीवन मूल्य नहीं है। इ सामने सदियों के पिछड़ेपन की कमी पूरी करने और लोगों की दैनिक आवश्यकताओं की करने की समस्या है। जिस पैमाने पर इसके लिये धन और मानवशक्ति की आवश्यकत वह भारत सरकार ही कर सकेगी। मैंने सुझाव दिया कि इन रियास्तों का एकीकरण कर जावे और उसका शासकीय प्रबन्ध भारत सरकार चीफ कमिश्नर या लै0 गवर्नर द्वारा राजाओं ने मेरा सुझाव मान लिया। भण्डी के राजाओं ने अभिवक्ता के तौर पर इस बात जोर डाला कि नये प्रान्त के शासन्न में उनकी भी कुछ आवाज़ रहनी चाहिये। मैंने कहा तीन राजाओं की एक परामर्शदात्री समिति बना दी जाएगी। नये प्रान्त का नाम हिमाचल प्र होगा। इतिहास की इस गतिशीलता में चम्बा का भिन्न अस्तित्व 8, मार्च 1948 को स हो गया जबकि एक सन्धि द्वारा राजा ने भारत सरकार को अपने शासन का पूरा एकाधि प्रभुत्व सौंप दिया । इस प्रकार चम्बा रियास्त हिमाचल प्रदेश राजनैतिक, शासकीय इकाई एक अलग ज़िला बन गया।

चम्बा राजा ने विलीनीकरण के लिये जो सन्धि की, उसकी निम्न फार्म हैः-

## Article 1

Agreement made this.............day of march, 1948 between Governor General of India and.......................of.

Whereas the...............of...............is desirous in the best inter the said state & its people that Govt. of India should take over as earl possible the administration of the said state and integrate its territoris

the territoris of other East Pubjab states so as to consolidate these territories in one administrative unit;

And whereas it is the intention of the Govt. of India to unite and integrate the territories of the East Punjab hill states in one centrally administered unit and to provide as soon as practicable and subject to the provision of the constitution of India for its administration through Lt. Governor with as advisory Council consisting of the three Rulers of the East Punjab hill states and a local legislature with such Constitution, function and powers as the Govt. of India may from time to time specify:-

## Article 2

The...........shall with effect from the said day be entitled of ......... rupee free of taxes. This amount is intended to cover all the expencies of the rulers and his family, including expencies on account of his personal staff, maintenance of his residences marriages and other ceremonies etc. and will neither, be increased nor reduced for any reason whatsoever.

## Article 3

The...........shall be entitled to the full ownership, use and enjoyment of all private properties (as distinct from state properties) belonging to him on the date of this agreement.

## Article 4

The...........shall be entitled to all personal privileges enjoyed by them, whether within on outside the territories of the state immediately before the 15th day of August, 1947.

# भाग दो

## चम्बा का सांस्कृतिक अध्याय

# मन्दिर

चम्वा में प्राचीन काल से देवमन्दिरों की स्थापना करके जनता की धार्मिक भावना से परिपूर्ण रखने के लिये तत्कालीन राजाओं ने काफी कीर्ति अर्जित की थी। यह पुनीत परम्परा हर राजा ने अक्षुण्ण रूप से निभाई । उस काल की कलाकृतियां आज भी अपने अनुपम रूप में विद्यमान हैं। चम्बा मध्यकाल में निर्मित असंख्य मन्दिरों, पनघट लेखों, ताम्रलेखों, शिलालेखों, आदि ऐतिहासिक पुरातत्व अवशेषों से समृद्ध सांस्कृतिक परम्पराओं को आज भी संजोए हुए है। अतः यह सुदूर स्थल जहां अतीत का भव्य स्मारक है, वहां भारतीय पुरातत्व, इतिहास के प्रेमियों और पर्यटकों के लिये बहुमूल्य आकर्षण का केन्द्र भी है। विभिन्न देवी-देवताओं और सिद्धों के मन्दिरों से व्याप्त यह क्षेत्र इस काल का मूर्त्त प्रमाण है कि यहां के शासक तथा प्रजा अज्ञात काल से कितने धार्मवलम्बी और देव-उपासक रहे होंगे। धर्मात्माओं और अध्यात्म पुरुषों की धारणा है कि समस्त चम्बा भूमि आध्यात्मिक आधार से ओत प्रोत है।

इन मन्दिरों की निर्मिति दो प्रकार की है-समस्थल तथा पर्वतीय शैली के पर्वतीय मन्दिरों के छतरी की तरह छत और स्तम्भ होते हैं। भगवान विष्णु के सभी मन्दिर् समस्थल प्रकार में आते हैं जबकि देवी और नाग देवता के मन्दिर पर्वतीय प्रकार में आते हैं। इस से यह प्रतीत होता है कि देवी और नाग पूजा पहाड़ों में बहुत पहले से चल रही है जबकि विष्णु पूजा दशमी शताब्दी में आरम्भ हुई। ढलवाँ स्लेट की छत वाले मन्दिरों में उत्तर गुप्तकालीन कला का प्रभावें है। चम्बा अपनी ऐतिहासक पृष्ठभूमि, पुरातत्व समृद्धि, प्राकृतिक आभा तथा मध्यकालीन मन्दिरों के वैभव के कारण पहाड़ी जिलों में सर्वोपरि स्थान रखता है।

920 ईसवीं में राजा साहिल वर्मा ने चम्बा में अनेक मन्दिरों की स्थापना की, जिन में चन्द्रगुप्त और त्र्यम्बकेशवर के मन्दिर उस समय के हैं जिनका निर्माण उन दो शिव मूर्तियों के लिये किया गया जिन्हें राजा ने साल नदी से ग्रहण किया जब वह चरपट नाथ योगी के आदेशानुसार उस स्थान पर नहा रहा था जो रावी और साल का संगम है। इस छोटी सी नगरी में मन्दिरों की वर्तमान संख्या 72 है। नगर के मध्य में चम्पावती का मन्दिर है। जिसे चमेसनी भी कहते हैं। वास्तुकला की दृष्टि से यह मन्दिर अद्वितीय है।

## चम्बा नगर के प्रसिद्ध मन्दिर

**चम्पावती मन्दिर** परम्परागत कथा के अनुसार यह मन्दिर राजा साहिल वर्मा ने अपनी एकमात्र पुत्री चम्पावती के नाम पर बनवाया था। चम्पावती ने ही राजा को चम्बा नगर राजधानी के रूप में बसाने की प्रेरणा दी थी। चम्पावती मन्दिर में देवी चम्पावती को महिषमर्दिनी के रूप में चित्रित किया गया है। वंशावली में एक श्लोक से यह सिद्ध होता है कि साहिल वर्मा के प्रवेश से पहले ही यहां देवी चम्बावती महिषमर्दिनी के रूप में पूज्य थी। श्लोक इस प्रकार हैः-

विजित्य क्षत्रिमान्युद्धे पुरी चम्पा चकारह
पुरैव चम्पके नालकताम् देव्याभिरक्षिताम् ।
चम्पा वत्यैव महिषादीन्हत्वे इरावती तटे ।।

इस से सिद्ध होता है कि चम्बा राज्य पहिले ही विद्यमान था। साहिल वर्मा ने क्षत्रियों से हथिया लिया। चम्पा का नाम चम्पा वृक्षों की बहुलता के कारण भी बताया जाता है। हो सकता है कि राजकुमारी ने मन्दिर का जोर्णोद्धार किया हो।

**रानी सूही मन्दिर** चम्बा नगरी के पूर्वाभिमुख शैल शृंग पर रानी सूही का मन्दिर सुशोभित है। मार्मिक लोक गाथानुसार उन दिनों चम्बा नगर में पानी की बड़ी तंगी थी । और उचित प्रबन्ध न था । राजा को यह चिन्ता सताती थी। जब पर्वत के पीछे से पानी लाने का प्रयत्न किया गया तो कारणवश पानी ने निश्चित स्थल से बहना अस्वीकार कर दिया। चरपट नाथ योगी के प्रभाव और मंत्रणा से रानी ने अपना बलिदान कर चम्बा के लिये जलस्रोत की उत्पत्ति की । पश्चात् रानी की भक्तिपूर्ण स्मृति में उसी स्थान पर राजा द्वारा एक स्मारक बनाया गया। 15 चैत्र से पहली वैशाख तक रानी सूही के पुण्य स्मारक पर हर वर्ष मेला का आयोजन भक्तिपूवक किया जाता है। प्रशंसा में लडकियों और महिलाओं द्वारा गीत गाए जाते हैं। इस अवसर पर एक विशेष प्रकार के गीत प्रचलित हैं जिन्हें घुरेई कहते हैं। मन्दिर-पहाड़ी तक राजनौन से सीढ़िया राजा ने बनवाई ।

## मन्दिर श्री लक्ष्मी नारायण

चम्बा रियासत का सर्वप्रमुख मन्दिर लक्ष्मी नारायण का है। लक्ष्मी नारायण मन्दिर पुरातत्व और धार्मिक दोनों दृष्टिकोणों से अद्वितीय है। यह राजा साहिल वर्मा की देन है। लक्ष्मी नारायण मन्दिर में भगवान विष्णु की पूरे मानवकाय की चतुर्मुख तथा चतुर्भुज संगममरमर की भव्य खड़ी प्रतिमा प्रतिष्ठित है, इसे बैकुण्ठ भी कहते हैं, मन्दिर के प्रति लोगों में बहुत अधिक आस्था ओर श्रद्धा है। इसकी कला अतीव आकर्षक है। प्रतिमा के अगले दो हाथ शंख तथा पद्‌म से युक्त हैं। पीछे के दो हाथ गदा-देवी और चक्र-पुरुष को स्पर्श किए हैं। पैरों के बीच भू देवी की प्रतिमा है। प्रतिमा के दाहिनी ओर सिंह तथा बाई ओर बराहमुख हैं। भारत भर की विष्णु मूर्तियों से इसमें अत्यधिक भिन्नता है। कश्मीर के मार्तण्ड मन्दिर तथा अवन्तिपुर के विष्णु चम्बा के विष्णु से मिलती जुलती चतुर्मुखी तथा चतुर्भुजी प्राचीन मूर्तियां हैं। लक्ष्मी नारायण की वैकुण्ठ मूर्ति के पृष्ठभूमि में तोरण है जिस पर दस अवतारों की लीला लिखित है। वंशावली के अनुसार यह प्रतिमा मुकुटकोट से लाई गई । नगर कोट (कांगड़ा दुर्ग के अभिलेख के अनुसार प्रतिमा वहां विद्यमान थी और वहां से चम्बा लाई गई। किन्तु किंवदन्ती अनुसार राजा साहिल वर्मा ने अपने नौ पुत्र विन्ध्या पर्वत से विष्णु की मूर्ति बनाने के लिये संगमरमर लाने के लिये भेजे। जो वह पत्थर लाए, तराशते समय उस में से मेंडक निकल आया। उसे नाकारा जान राजकुमारों को दोबारा भेजा, तो दुर्भाग्य से डाकुओं ने उन का चध कर दिया। तीसरी बार ज्येष्ठतम राजकुमार को कुछ सन्यासियों की सहायता

से भेजा। वह जो संगमंरमर का पत्थर लाया, उसी से विष्णु की मूर्ति बनी। मन्दिर की ऊंचाई 65 फुट है।

लक्ष्मी नारायण मन्दिर की परिधि के भीतर जाने पर शिखर शैली के अन्य 6 मन्दिर

*श्री लक्ष्मी नारायण जी*

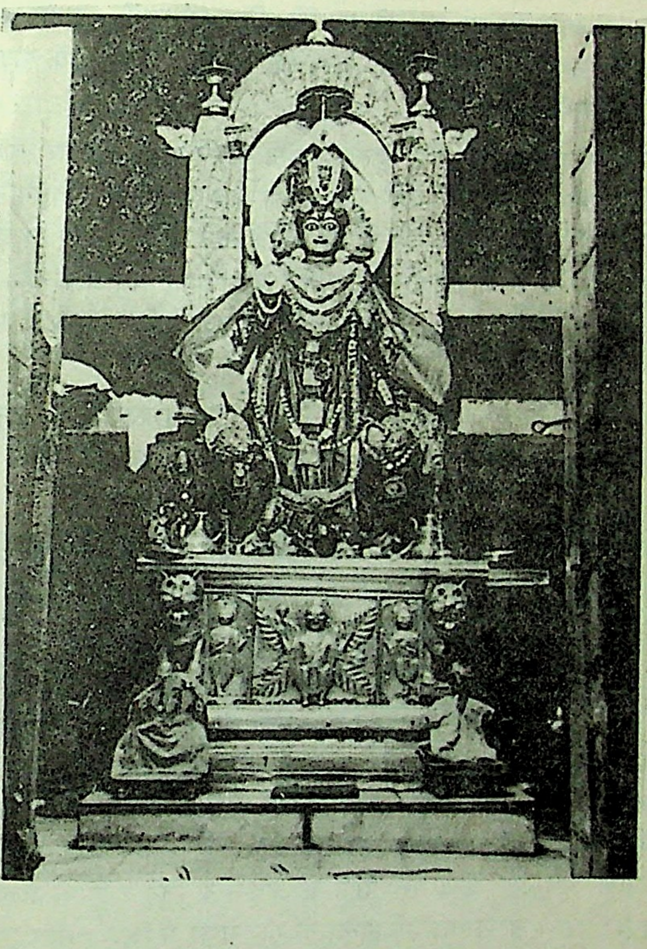

क्रमशः उत्तर से दक्षिण की ओर विभिन्न देवों के इस प्रकार हैः- सर्वप्रथम श्री राधाकृष्ण जी, श्रीचन्द्रगुप्त महादेव जी, श्री गौरी शंकर जी, श्री त्र्यम्बकेश्वर जी तथा श्री लक्ष्मी दामोदर, तथा उत्तर में श्री हनुमान जी। अपनी विशिष्ट कला और प्राचीनता की दृष्टि से गौरी शंकर, चन्द्रगुप्त महादेव और त्र्यम्बकेश्वर के मन्दिरों की प्रतिमायें विशेष आकर्षण प्रस्तुत करती हैं।

श्री हरि राय मन्दिर- यह मन्दिर चौगान अथवा गान्धीद्वार के पास चौगान के समीप

अवस्थित है। वास्तुकला की दृष्टि से हरिराय की मूर्ति लक्ष्मी नारायण की वैकुण्ठ प्रतिमा से भिन्न है और अष्ट धातु से निर्मित है। यह प्राचीन मन्दिर पत्थर की खुदाई का अनूठा नमूना है। जष्ट वर्मा ने इसे 11वीं शताब्दी में बनवाया। प्रतिमा की द्विभंग स्थिति में उत्कष्ट कला के दर्शन होते हैं। इस मूर्ति की विशेषता यह है कि सभी आभूषण प्रतिमा पर ही अंकित हैं। मूर्ति के पार्श्व मुख (कपिल) का ज्ञान सामान्य लोगों को तभी हुआ जब यह मूर्ति 7 मई 1971 को मन्दिर से चोरी हुई और उसी वर्ष 4 जुलाई को बम्बई से प्राप्त हुई। इसे एक करोड़ मूल्य देकर अमरीका ले जाया जा रहा था। हरि राय की प्रतिमा श्री लक्ष्मी नारायण की मूर्ति के साथ शंख, चक्र, गदा तथा भूदेवी की स्थापना में लगभग समरुप है। इस के पार्श्व पृष्ठ में महाकाल की मूर्त अंकित है।

बंसी गोपाल मन्दिर- बनगोटू मुहल्ला में बंसी गोपाल मंदिर के भीतर भगवान कृष्ण और राधा की प्रतिमाएं हैं। बाहिरी भाग में भी एक ओर आकर्षक प्रतिमांए विद्यमान हैं। नगर की पूर्वी पहाड़ी पर चामुण्डा देवी का मन्दिर और उसके नीचे नरसिंह मन्दिर पहाड़ी शैली में बने हैं। चामुण्डा देवी मन्दिर की छत पर उत्कृष्ट कला में काष्ठ पर चित्र अंकित हैं। अधिकतर लोग चौप्डी को चण्डी मानते हैं, चामुण्डा देवी नहीं। रावी नदी के किनारे पुल के पास शीतल देवी का मन्दिर अधिक मान्य है।

व्रजेश्वरी मन्दिर-चम्बा नगर के उत्तरी छोर पर भगवती व्रजेश्वरी का प्रमुख मन्दिर है। इस में व्रजेश्वरी भगवती की प्रतिमा है। इस मन्दिर के समीप एक अन्य छोटा सा मन्दिर है जिस में भगवान विष्णु और गरूड़ की दो भव्य प्रतिमाएं हैं।

चर्पटनाथ मन्दिर–किंवदन्ति के अनुसार सिद्ध योगी चरपट नाथ राजा साहिल वर्मा के गुरु और मार्गदर्शक थे, उन्हीं की स्मृति में यह मन्दिर बनवाया गया । सीता राम का मन्दिर भी उल्लेखनीय है।

दशनामी अखाड़ा-प्राचीन काल से भारत में एक परम्परा थी कि राजप्रसाद के समीप ही राजगुरु और प्रमुख सन्यासी के आवास का प्रबन्ध रहता था। चम्बा में भी इस परम्परा का पालन हुआ। पहले सन्यासियों के लिये यह आवास वर्तमान रंगमहल के स्थान पर था। किंवदन्ती के अनुसार लक्ष्मी नारायण मन्दिर की मूर्ति के लिये संगमरमर पत्थर राजस्थान से लाने में साहिल वर्मा के पुत्र की डाकुओं से रक्षा का प्रबन्ध नागा साधुओं ने किया था, इसीलिये राजाओं ने नागा साधु और अन्य सन्यासियों के आवास के लिये दशनामी अखाड़ा बनाया और भोजन का प्रबन्ध लक्ष्मी नारायण मन्दिर के भोजनागार से किया। राजा उमेद सिंह ने 1757 में रंगमहल बनाने के लिये दशनामी अखाड़ा को वहां से हटा कर वर्तमान स्थान नखरोला में किया नखरोला नागाओं के घोष अलख नोल का अपभ्रंश है। सन्यासियों और ब्राह्मणों के प्रसन्न करने के लिये भगवान दत्तात्रेय की चरण पादुका गरनार पर्वत (गुजरात) से मंगवाकर अखाड़ा में स्थापित की।

## भरभौर के मन्दिर

भरभौर अथवा प्राचीन ब्रह्मपुर दसवीं शताब्दी से पूर्व प्राचीन राज्य की राजधानी था। भरभौर में शिखर शैली के दो मन्दिर हैं। बड़ा मन्दिर भगवान शिव का है, जो मनीमहेश मन्दिर नाम से प्रसद्धि है, इसे सातवीं शताब्दी में मेरु वर्मा ने बनाया । मन्दिर के सम्मुख प्रतिष्ठित नन्दी की पीतल की मूर्ति पर उद्धरण से प्रतीत होता है कि मेरु वर्मा ने इसी स्थान पर शिव मन्दिर बनवाया था। शिखर शैली का दूसरा मन्दिर नरसिंह भगवान का है। कला में अद्वितीय पीतल की मूर्ति रानी त्रिभुवन रेखा ने दसवीं शताब्दी में बनवाई।

मेरु वर्मा के काल के अनेक मन्दिर तथा ऐतिहासिक अवशेष अब भी उस समय की कलाकृति, वैभव और समुद्धि के द्योतक हैं। लक्षणा देवी और गणेश के मन्दिरों का अपना महत्व है। सूरजमुख स्मारक का निर्माण भी उस ने किया। महिषासुर मर्दिनी दुर्गा के मन्दिर का स्थानीय नाम ही लक्षणा देवी है। यह लकड़ी का बना है। इस पर विभिन्न देवी देवताओं की मूर्तियाँ चित्रित हैं। मन्दिर के गर्भगृह में अष्ट धातु की बनी चार फुट की मूर्ति वस्त्रों से सज्जित है। पुराने रीति रिवाज के अनुसार राजा चम्बा जब भरभौर जाते तो निवास स्थान जाने से पूर्व मन्दिरों में श्रद्धा सुमन भेंट करना आवश्यक था। मन्दिरों की परिधि में 84 सिद्धों के छोटे छोटे मन्दिर भी थे जिन में अब कई उपेक्षित हैं। मन्दिर परिसर में नांगा नावा कृष्ण गिरि की संगमरमर निर्मित मूर्ति है और कक्ष में बृहत शिवलिंग स्थापित है। मनीमहेश यात्रा के साथ वहां प्रतिवर्ष भारी मेला लगता है।

## मनी महेश

*मणि महेश तीर्थ स्थल*

शिव भक्तों के लिये मनीमहेश-कैलाश की बड़ी मान्यता है। यह कैलाश चम्बा जनपद की भरभौर तहसील में धौलाधार पर्वत शृंखला पर हिमाच्छादित उतंग की 18568 फुट पर चम्बा का सर्वाधिक पवित्र धार्मिक स्थान है और भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलों में इसकी गणना है। देवाधिदेवी महादेव शिव जी का यह कैलाश पर्वत स्थायी निवास माना जाता है। कैलाश पर्वत की तलहटी में डल एवं मैदान है जिसे शिव मैदान कहते हैं। मनी महेश में प्रत्येक बर्ष भाद्रपद मास में कृष्णाष्टमी तथा राधाष्टमी को मेला लगता है। इस मेले को देखने और मनीमहेश और उसकी शाखा तीर्थों पर स्नान करने, भारत के चारों ओर से लोग आते हैं। यह स्थान चम्बा से लगभग 80 किलोमीटर मन्दिर की दूरी पर है। चम्बा से मनीमहेश जाते हुए मार्ग में त्रिलोचन महादेव, भरभौर, हड़सर, धनछो, गौरीकुण्ड और शिवकरोत्री के तीर्थ आते हैं। त्रिलोचन महादेव चम्बा से 24 किलोमीटर रावी के दाहिनी ओर एक छोटा मन्दिर त्रिलोचन महादेव नाम से प्रसिद्ध है। यहां की मनीमहेश की भान्ति उन्हीं तिथियों में लोग रावी में स्नान कर पुण्य लाभ अर्जित करते हैं। किंवदन्ती के अनुसार इस तीर्थ का सम्बन्ध एक शिव सिद्ध गद्दी त्रिलोचन से किया जाता है। भरभौर में मनीमहेश का प्रसिद्ध मन्दिर है। भरभौर से आगे सत्रह किलोमीटर पर हड़सर पड़ाव है। यहां भी एक शिव मन्दिर है। इसके 7 किलोमीटर आगे धणछो धाम का स्थल है जहां बुडढ़ल नदी का जल 1500 फुट की ऊँचाई से प्रपात के रूप में गिरता है। जल की फुहार काफी दूर तक जाती है, यहां स्नान करना पुण्य कार्य माना जाता है। छो अर्थात् प्रपात और धन अर्थात् भेड़-बकरी का समूह। प्राचीन काल से यहां ऋषि मुनियों ने यहां तपस्या की। बारह हजार फुट की ऊंचाई पर मार्ग में एक अन्य तीर्थ गौरी कुण्ड आता हैं यहां एक गर्मजल का कुण्ड है जहां महिलाएं स्नान कर पुण्य लाभ करती हैं। इसके आगे शिव करोत्री का तीर्थ बुढल नदी के किनारे अति शीतल जल का स्रोत है। कहावत है कि यहां भगवान शिव के सिर से गंगा का जल निकलता है यह पुरुषों के स्नान के स्थल है! यह सारी यात्रा दुर्गम है किन्तु अब हड़सर तक जीप जाती है। किंवदन्ती अनुसार मनीमहेश यात्रा पर पाण्डवों का भी आगमन हुआ था, इस प्रकार यह तीर्थ अति प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध है।

## तीर्थ स्थान त्रिलोचन महादेव

चम्बा-भरभौर सड़क पर रावी नदी के दायें किनारे पर एक छोटा सा शिव-मन्दिर त्रिलोचन महादेव के नाम से प्रसिद्ध है। यहां मनीमहेश की भान्ति दोनों पर्व मानाये जाते हैं। और लोग रावी नदी में स्नान करते हैं। मन्दिर तो नगण्य है किन्तु इस की महत्ता पर्व की दृष्टि से अधिक है। इसके सम्बन्ध में एक रोचक कथा प्रचलित है। त्रिलोचन नामक गद्यी युवक मनीमहेश को उपत्यकाओं में भेड़े चराया करता था। एक बार उसे भगवान शिव फुसला कर भेड़ों समेत कैलाश पर ले गए। वह समय और स्थान का ज्ञान भूल गया उसके परिजन उसे मृतक समझ उस का चतुर्थ वर्ष का श्राद्ध कर्म कर रहे थे कि त्रिलोचन अपनी बांसुरी की तान से भेड़ों समेत घर आ पहुंचा त्रिलोचन को देख उसके परिजन आश्चर्यचकित हो स्तब्ध रह गए और उसे त्रिलोचन का भूत समझने लगे। त्रिलोचन द्वारा समझाने पर उन्हें तसल्ली हुई और प्रसन्नता भीं उसके परिजन यह जानने के लिये उत्सुक थे कि वह चार वर्ष कहां

रहा त्रिलोचन टालमटोल कर सच्ची बात छिपाता रहा क्योंकि भगवान शंकर ने उसे मनीमहेश जाने की घटना प्रकट करने से मना किया था, नहीं तो उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। उसकी पत्नी का रहस्य जानने का हठ था। त्रिलोचन सपत्नी भेड़ें लेकर खणी गया। पत्नी ने पुनः आग्रह किया तो उसने वह रहस्यमयी घटना सुना दीं तभी वह पत्थर से फिसल कर रावी में जा गिरा। उस का मृतक देह आज के त्रिलोचन मन्दिर के स्थान पर आ कर लगी। वहीं उसका दाहसंस्कार किया गया और स्मृति में त्रिलोचन महादेव तीर्थ स्थान बना।

## शक्ति मन्दिर छतराड़ी

भरभौर के लक्षणा देवी मन्दिर से मिलता जुलता छतराड़ी में शक्ति मन्दिर है, यह लक्षणा देवी मन्दिर के समय से ही बना है। इस का निर्माण पहाड़ी पद्धति पर हुआ। भगवती भक्ति के मन्दिर में काष्ठ शिल्प तथा भित्ति चित्र कला के उत्कृष्ट नमूने सुरक्षित हैं। गर्भगृह में मानवाकार अष्ट धातु की मूर्ति है। यह मन्दिर वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना है। मन्दिर में लगी लकड़ी पर स्तम्भ, प्रवेश द्वार पर विष्णु, ब्रह्मा, शिव, गणेश, गंगा यमुना, यक्ष इत्यादि की मूर्तियां लकड़ी पर खोदी हैं। मूर्ति के नीचे, निचले भाग पर कुटिल लिपि में शिलालेख पर मेरु वर्मा की प्रशस्ति अंकित है। भाद्रमास में प्रतिवर्ष यहां मेला लगता है, मनीमहेश जल से पवित्र जल लाकर देवी का स्नान करवाया जाता है। पर्वतीय मन्दिरों में इस देवालय को गोरव का स्थान प्राप्त है। इस देवालय को बनाने का श्रेय भी राजा मेरु वर्मा और उसके ख्याति प्राप्त शिल्पकार गूगा को है। छतराड़ी चम्बा नगर से 45 किलो मीटर की दूरी पर, लूणा पुल से ऊपर की ओर है।

## चन्द्रशेखर मन्दिर साहो

चम्बा नगर से बीस किलोमीटर उत्तर पूर्व की ओर साल नदी के किनारे स्थित साहो ग्राम में शिवालयों में सर्वाधिक प्रसिद्ध प्राचीन शिवालय चन्द्रशेखर नाम से प्रसिद्ध है। मन्दिर का निर्माण स्थानीय राणा सात्यकि ने किया। मन्दिर में साढ़े चार फुट का वृहत् शिवलिंग ऊंची पीठ पर प्रतिष्ठित है। किंवदन्ति के अनुसार एक महिला को स्वप्न में आदेश हुआ कि प्रतिमा को स्वती नदी से निकाल कर गांव के मध्य में स्थापित किया जावे। महिला ने स्थानीय लोगों की सहायता से निर्दिष्ट स्थान से शिवलिंग को ग्रहण किया और सम्मानपूर्वक पालकी में बिठाकर लाए। उक्त स्थान पर पहुंच पालिका का भार इतना भारी हो गया कि आगे नहीं बढ़ सके, वहीं पर निर्देशानुसार शिवलिंग की स्थापना कर दी गई। बाद में मन्दिर बनवाया। इस पर ताम्र पत्र चढ़ा है, जो कि स्थानीय खान साहो से निकला है। किंवदन्ती के अनुसार (जूं जूं ताम्रपत्र चढ़ाते गए, पिण्डी का आकार बढ़ता गया। जब आकार विशाल हो गया तो ताम्र चढ़ाना बंद कर दिया। मन्दिर के सामने प्रांगण में पाषाण की विशाल नन्दी की मूर्ति बनी है।

वर्ष में दो बार यहां मेला लगता है। एक बार वैशाख मास में यात्रा होती है और दूसरी बार भादों मास में मनीमहेश पर्वी के समय यहां भी नदी में स्नान और मेला होता है। स्थानीय लोगों में मन्दिर की बड़ी मान्यता है। मन्दिर की परिधि में पश्चिमाभिमुख लक्ष्मी-विष्णु

का मन्दिर है। विष्णु के तीन मुख हैं एक ओर वराह और दूसरी ओर नृसिंह की मूर्ति है। ऊपरी भाग में लक्ष्मी की मूर्ति है। बड़ी मूर्ति के दोनो ओर ब्रह्मा और शिव की मूर्तियाँ है। प्रभामण्डल के ऊपर दाईं ओर राम और बुद्ध तथा बाई ओर परशुराम एवं कल्कि अवतार सुशोभित हैं। शिव रात्रि को भी यहां विशाल मेला लगता है।

नाग पूजा, नाग मन्दिर खज्यार - चम्बा में नाग पूजा प्राचीन काल से प्रचलित है। घर में गौ-भैंस सूने पर इन का दूध-घी जब तक नाग मन्दिर में नहीं चढ़ाया जाता उसका प्रयोग नहीं किया जाता है। नाग वर्षा, धन-धान्य का भी देवता माना जाता है। लोहे की शिलाखों, पीतल ओर चान्दी के बने सर्प मन्दिर में रखे जाते हैं। अति सुन्दर, सौम्य, प्राकृतिक छटा से परिपूर्ण स्थान खज्यार में खज्जी नाग का मन्दिर विद्यमान है। यह स्थान चम्बा डल्हौजी की सड़क के मध्य में चम्बा से 13 किलोमीटर पर समुद्र तल से 6300 फुट की ऊंचाई पर आति रक्य और पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। देवदार के जंगल, हरे भरे मैदान और छोटी सी डल द्वारा अति मनमोहक, वर्णातीत दृश्य है खज्यार का यहां लकड़ी के बने मन्दिर में खज्जी नाग की मूर्ति प्रतिष्ठित है। नाग मन्दिर में हर वर्ष वर्षा ऋतु में मेला-यात्रा होती है, रात्री जाग्रण होता है।

## नृकुला देवी मन्दिर लाहौल

यह काली का मन्दिर है जो गांव के प्राचीन स्थानीय नाम चम्बा लाहौल, से ही प्रसिद्ध है। यह सम्भवतः दसवीं, ग्यारहवीं शताब्दी की निर्मिति है। यह मन्दिर अद्वितीय है। इस की खुदाई की कला भरभौर और छतराड़ी के मन्दिरों से भी बढ़ चढ़ कर है। मन्दिर के सामने मण्डप है। दोनों के घेरे बड़ी मज़बूत पत्थर की दीवार से घिरे हैं। मन्दिर के भीतर का दृश्य अत्यन्त आकर्षक है। मन्दिर के अगले भाग के सामने दो बड़े आकार के द्वारपाल (भैरव) की मूर्तियाँ खड़ी हैं। रक्षा गृह पर रामायण और महाभारत से अनेक दृश्य दिखाए गए हैं। यथा राजा विराट के पशुओं का कौरवों द्वारा पकड़ा जाना, दूसरी उत्तरी किनारे पर महाभारत के आदि पर्व से दृश्य, द्रौपदी का स्वयम्बर, पश्चिमी ओर रामायण के दृश्य-सुन्दर काण्ड और युद्धकाण्ड, महेन्द्र पर्वत से हनुमान छलांग लगाते हुए, राम, लक्ष्मण तीर कमान लिये अन्य बन्दरों के साथ, अशोक वाटिका, हनुमान का पेड़ पर चढ़ना। पूर्वी ओर विष्णु के अवतारों के दृश्य, कूर्मावतार आदि, सूर्य का दृश्य, अमृत-मन्थन आदि काली की मूर्ति महिष मर्दिनी के रूप में है। इसके आधार पर शारदा अक्षरों में खुदा है कि यह पंजमानक नाम क़े व्यक्ति ने भद्रवाह से बनवाई । इस पर शास्त्र सम्वत् 4645 खुदा है।

मिंधल भगवती मन्दिर - किलाड़ (पांगी) से 17 किलो मीटर दूरचन्द्र भागा के बांये किनारे मिंधल भगवती का प्रसिद्ध मन्दिर है। यहां भाद्रमास में एक विशाल मेला लगता है जिसमें पांगी लाहौल के हज़ारों लोग भाग लेते हैं। नृत्यगान और मद्यपान के साथ यहां सैकड़ों बकरों की बलि दी जाती है।

त्रिलोकनाथ लाहौल–उदय पुर के त्रिलोकनाथ मन्दिर में बोधिसत्व अवलोकितेश्वर

की संगमरमर की मूर्त्रि प्रतिष्ठित है। यह अति प्रसिद्ध मन्दिर है जहां बौद्ध और हिन्दू दोनों पूजा करते हैं।

देवी कोठी -- चम्बा में प्रतिष्ठा प्राप्त मन्दिरों में देवी कोठी चुराह का भगवती चामुण्डा का देवालय विशेष स्थान रखता है। 1754 ई0 में राजा उमेदसिंह द्वारा बनाया गया यह मन्दिर काष्ठ चित्रों और भित्ति चित्रों से भरपूर है। इन पर मुगल शैली का भी प्रभाव है। यह स्थान बैरागढ़ से आगे है और हर वर्ष यहां बड़ा मेला जात्रा रूप में लगता है। वैशाख मास में चामुण्डा देवी की प्रतिमा को धूमधाम के साथ हर वर्ष चम्बा में चौण्डा मन्दिर में लाया जाता है।

अन्य प्रमुख दो स्थल -- पर्वत लिहल के पर्वत शिखर पर वासु की नाग का मन्दिर बना है। मन्दिर के बाहिर पत्थर की नन्दी की मूर्ति बनी है। इस नाग के पूजन के लिये दूर दूर से लोग आते हैं।

भरभौर के गर्भ में बनी भगवती, भरभौर के साथ भरमाणी माता, भटालवाँ में जालपा देवी का मन्दिर, कुगति में कैलाश मन्दिर प्राचीन कालीन पूजा स्थल है। उदयपुर लाहौल में चन्द्र भागा के साथ जहां भयाड़ नाला मिलता है, एक काष्ठ की खुदाई का भव्य काली भगवती का मन्दिर है। लाहौल में एक अन्य देवी का मन्दिर भिरकुला देवी के नाम से जाना जाता है। अर्वाचीन मन्दिरों में भलेई में भद्रकाली का मन्दिर अच्छी ख्याति प्राप्त कर चुका है। हरदासपुर-चम्बा में नवनिर्मित भारत माता मन्दिर अपने ही प्रकार का प्रेरणा स्थल है।

सूर्य मन्दिर अथवा सूर्य प्रतिमाएं -- सूर्य की मूर्तियां चम्बा के गूंके इलाके में पाई जाती है जो कि चम्बा और भरभौर के बीच एक ऐतिहासिक स्थान है, पुराना नाम शिवपुरी है। यहां जो शिव मन्दिर है, उसके गर्भ गृह के बाहिर दो सूर्य की प्रतिमाएं हैं मूर्ति सात घोड़ों के रथ पर सवार है और रथ का संचालन अरुण देव कर रहे हैं। उषा और प्रत्यूषा मूर्ति की दाई, बाई ओर कलापूर्ण ढंग से धनुष पर तीर चढ़ाए खड़ी हैं। यह गुप्ता शैली की बताई जाती है। सूर्य की मूर्तियाँ कई पन्त्रिहारों पर पाई गई हैं। जैसे छतराड़ी में।

## चम्बा की कला-सम्पदा व सांस्कृतिक धरोहर

कला की दृष्टि से समूचा चम्बा क्षेत्र अति समृद्ध है जहां हिमालय के आंचल में स्थित चम्बा की उपत्यकाओं और अधित्यकाओं में बसे सभी गांवो, नगरों और उपनगरों में सर्वत्र सहज ही वैविध्यपूर्ण और सुरुचिपूर्ण कलाओं के दर्शन होते हैं। हिमालय के प्राकृतिक परिवेश में प्रकृति यहां नैसर्गिक रूप में विराजती है और यह परम सन्तोष और हर्ष का विषय है कि पहाड़ी संस्कृति की यह विशिष्ठ कला संपदा अभी अक्षुण्ण है, अछूती है। उस में विकृति नहीं आ पाई है। इस अनुपम पहाड़ी कला और संस्कृति के दर्शन चम्बा के आन्तरिक क्षेत्रों - विशेष रूप से भरभौर, पांगी, चुराह के भीतरी भागों में सहज ही देखने-सुनने को मिलते है जहां कलाएं अलग नहीं दीखती। पहाड़ी जनजीवन का यह अभिन्न अंग है। संगीत, वाद्य, नृत्य, लोकनाटय आदि साधारण जन-मानस से जुड़ा है और यह क़लाएं आदिकाल से पहाड़ी जन-जीवन को अनुप्रणित और अनुप्रेरित करती रही है।

मूर्तिकला, वास्तुकला, चित्रकला और संगीतकला में चम्बा देश और विदेशों में विख्यात है। हिन्दु धर्म के मुख्य पूज्य देवी-देवताओं आदि शक्ति चंडिका, आदि देव महादेव, नागदेव, विघ्नेश, सूर्य तथा अन्य ग्रामदेवों, कुलदेवियों की पाषाण, धातु और काष्ठ की बनी मूर्तियां यहां सभी जगहों पर ऊंचे पर्वत - शृंगों से लेकर पहाड़ों की तलहटी में बसे छोटे बड़े सभी गांवों में स्थापित मिलती है। अब तक प्राप्त धातु मूर्तियों से पूर्व की पाषाण प्रतिमाएं प्राचीनतम हैं। शिव-शक्ति और नागदेव की प्राचीन मूर्तियां जो चम्बा में पूजित हैं, पांचवीं-छठी शताब्दी (ई) की हैं। इन पाषाण मूर्तियों में वर्तमान "गूँ" नामक गांव से प्राप्त सूर्य मूर्ति जो अब भूरी सिंह संग्रहालय, चम्बा में रखी गई है, प्रचीनतम है। औंर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। छोटे से इस गूँ ग्राम का प्राचीन नाम शिवपुरी है। और वहां अभी भी दस शिवलिंग स्थापित हैं। समीप के पठाणीं नाले में कुछ शिलालेख भी हैं और एक सुन्दर आयताकार पाषाण खंड पर प्राचीन कुटिल लिपि में उत्कीर्ण लेख गूँ ग्राम को एक प्रमुख शैवपीठ प्रमाणित करता है। गूँ के नीचे बह रही रावी (ईरावती) के तट पर "त्रिलोचन महादेव" का सुप्रसिद्ध तीर्थ है जहां राधा अष्टमी के दिन हज़ारों की संख्या में लोग पर्व स्नान करते हैं। नदी पार दर्भाला (दर्भालय/दूर्वालय) नामक ग्राम है जहां से दूर्वा और दर्भ शिवपूजन के लिये त्रिलोचन महादेव और शिवपुरी (गूँ) लाई जाती थी। नागदेव, शिव, भगवती महिषमद्रिनी व शक्ति के अन्य रूपों पर आधारित सुन्दर पाषाण मूर्तियाँ "भरभौर", "चुराह", पांगी, सलूणी, चम्बा तथा भट्टियात के वर्तमान उपमंडलों में मिलती है। पाषाण की सुन्दर कलात्मक मूर्तियों में शिव (छत्राढ़ी), कार्तिकेय (कुलेठ-भरभौर), चम्पावती (चम्बा नगर), नागदेव (खजियार, झम्वार, द्रब्बड़ (सलूणी), शरार (सलूणी) बगोड़ी (तीसा), तथा चम्बा नगर प्रसिद्ध है।

## धातु-मूर्तियां

मूर्ति निर्माण के क्षेत्र में धातु मूर्तियों का निर्माण काल चम्बा में छठी-सातवीं शताब्दी में माना जाता है। तत्कालीन चम्बा राज्य की राजधानी भरभौर (ब्रह्मपुर) में भगवती लक्षणा देवी, नृसिंह, विघ्नेश गणपति और शिववाहन (नंदी वृषभ) की सुन्दर, विशाल और कलापूर्ण अष्टधातु की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। इन भव्य मूर्तियों का निर्माण चम्बा नरेश मेरू वर्मन (680 ई) के राज्य काल में हुआ था। उपरोक्त मूर्तियों मेरू वर्मन का उल्लेख लिपि में उत्कीर्ण लेखों से राजा चम्बा राज्य की प्राचीन वंशावली में राजा मेरू वर्मन के समय की मूर्तियों का वर्णन इस प्रकार है:- "योगाचार्यस्य स्वताम्, सुमरोरिव चादघात देवदेवस्य स्थितये, मूर्ति नरहरेरपि प्रतिष्ठाप्य स्वगुरुणा कश्मीरेण महात्मना सूर्यांशतात्मा भद्रकाली तत्र गणाधिपं संस्थाप्य वृषभस्याधस्तबलिरवद्राज शासनम्"

अष्ट धातु में बनी अन्य प्राचीन मूर्तियों में छत्राढ़ी ग्राम में आदिशक्ति, चम्बा नगर में हरिराय (विष्णु चतुरानन) व गौरी शंकर, उदयपुर (लाहौल) में मृकुलादेवी और भगवती हिडिम्बा देवी (मैहला) कला सौष्ठव की दृष्टि से विश्व विख्यात हैं। चम्बा में निर्मित तथा प्रतिष्ठित अन्य सुन्दर मूर्तियों में श्री लक्ष्मीनारायण, श्री लक्ष्मीदामोदर, बंशीगोपाल, श्री सीताराम, राधाकृष्ण, चन्द्रगुप्त, त्रिमुख, त्र्यम्बकेश्वर, लक्ष्मीदामोदर, कासेश्वर (सभी चम्बा नगर), आदि

क्ति (सिधोट-हिमगिरि), भगवती जालपा (मैहला और भटालवाँ), जालपा भगवती (बाड़ीदेहरा) ष्णु (साहो), गणपति तथा भद्रकाली (साहो), गणपति (मसरूंड) के मंदिरों में प्रतिष्ठित है। म्बा के लोग प्राचीनकाल से शैव एवं शक्ति धर्म का अनुसरण करते आये हैं। पड़ोसी राज्य श्मीर के शैवमंत का यहां के लोगों और चम्बा की मूर्तिकला पर काफी प्रभाव रहा है। शिव, क्ति, गणपति और नाग की मूर्तियां यहां सभी उपमंडलों में सभी स्थानों पर मिलती हैं। मन्दिरों स्थापित तथा बाहर खुले में स्थापित शिवलिंगों की संख्या बहुत अधिक है। इन सभी शिव न्दिर तथा शिव स्थानों पर बलि देने की प्रथा है जो अन्यत्र कहीं भी नहीं है। शिवजी को हां मेंढ़ा (भेडू) की बलि दी जाती है अन्य किसी पशु की नहीं। कश्मीर तथा भारत के अन्य गों में शिवजी को इस प्रकार की बलि देने की प्रथा नहीं है। लोगों का विश्वास है कि पशु लि शिवजी के गणों भैरों आदि को दी जाती है। शिवजी को मेढा बलि देने की प्रथा यहां चलित शक मत के फलस्वरूप प्रचलित हुई। शक मन्दिरों में केवल बकरे की बलि दी जाती । चम्बा में शिव और शक्ति तथा शैव-शाक मत का विलक्षण सांमजस्य और सुमधुर मिलन खने को मिलता है। शिव को अर्ध नारीश्वर के रूप में यहां पूजा जाता है। शक्तिविहीन व-शव के समान है। संभवतः यही कारण है कि चम्बा तथा अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में बसे सभी र्गो -जातियों के लोग मांस खाते हैं। ब्राह्मण भी अब कुछ अपवादों को छोड़ का मांस भक्षी । मांगलिक उत्सवों जन्म, चूड़ाकर्ण, अन्नप्राशन, नामकरण, विवाह आदि पर आयोजित भोज र मांस प्रयोग में लाया जाता था पितृ-तर्पण तथा श्राद्धों पर भी मांस का भोज तैयार कर लाया जाता था। श्री कृष्ण जन्माष्टमी तथा राधाअष्टमी के पर्वस्नानों पर मणिमहेश (भरभौर) र्थ पर शिवभक्त हजारों की संख्या में मेढ़ों को काटते हैं और खाते हैं। मांस भक्षण की या अब यहां सभी जगह निरंतर कम हो रही हैं। शैव-शाक धर्म की अपेक्षा वैष्णव धर्म यहां हाड़ों में बाद में पहुंचा। विष्णु मूर्तियों और विष्णु मन्दिरों का निर्माण यहां दसवीं-ग्यारहवीं ताब्दी में आरंभ हुआ इस से पूर्वकाल के यहां कोई विष्णु मन्दिर नहीं है।

## पत्य कला

चम्बा के पहाड़ देवदार (देवदारु), तोष, रै, बन्न (बाण), चील आदि वृक्षों के घने जंगलों भरे हैं जिन की लकड़ी का भरपूर प्रयोग यहां छोटे बड़े प्राचीन मन्दिरों, राजकीय (कामदार) ठियों और घरों में किया जाता रहा है। गणपति, लक्षणादेवी (भरभौर) कार्तिकेय (कुलेड), व (हड़सर), आदिशक्ति (छत्राड़ी) भगवती चंडी बैरेवाली (देवी कोठी), जाल्पा (मैहला) नाग हिडिम्बा मन्दिर (खजियार), नाग (झम्वार), भगवती जालपा (बाड़ी देहरा), भगवती बन्नी रभौर), चामुण्डा (चम्बा नगर), नाग तथा हिडिम्बा (गुड्डा), देहग्राँ (तीसा), शक्ति धोट-हिमगिरि), भान्दल, शक्ति देहरा आदि के सुप्रसिद्ध तथा अन्य अनेकों छोटे छोटे मन्दिरों निर्माण में लकड़ी का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार के सभी मन्दिरों का निर्माण एक शिष्ठ पहाड़ी शैली में किया जाता रहा है। गर्भगृह की दीवारें लकड़ी और पत्थर की बनी जिन की छतें बहुत ढलानदार रखी गई हैं ताकि हिमपात होने पर बर्फ तुरन्त फिसलकर चे भूमि पर गिरती रहे। गर्भगृह के चारों ओर प्रदक्षिणा मार्ग तथा मुख्यद्वार के बाहर मण्डप

की ऊपरी छत अपेक्षतया कम ढलानदार बनाई जाती रही है। छतों के ऊपर लकडी के मोटे तख्ते डाले जाते थे। अब इन छत्तों पर पत्थर के स्लेटों का प्रयोग किया जाता है। भरभौर, छत्राढ़ी, मैहला, उदयपुर, चामुण्डा, भरडयाठ, बाड़ी, देहरा, भान्दल, हिमगिरि, चम्पावती, देवीकोठी, शक्ति देहरा के शक्ति मन्दिरों में लकड़ी के स्तम्भों, स्तम्भ श्री, द्वारों, कोष्ठों, प्रकोष्ठों, भीतरी छत्तो (Ceilings) आदि पर खुदाई का अति सुन्दर और कलापूर्ण काम देखने को मिलता है। लक्षणादेवी (भरभौर) आदि शक्ति (छत्राढ़ी) तथा मृकुला देवी (उदयपुर) के मन्दिरों में लकड़ी पर उत्कीर्त मूर्तियों-अलंकरणों का काम अनुपम एवं अद्वितीय है। लकड़ी के यह पहाड़ी शैली में बने मन्दिर शताब्दियों से वर्षा, ताप, शत्त, वायु हिमपात्त के कोप को सहते हुए काल क्रमानुसार जीर्ण-शीर्ण दशा में पहुंचते रहे और उन का जीर्णोद्वद्धार व पुननिर्माण समय समय पर होता रहा परन्तु शैली वही बनी रही। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि सभी मन्दिर एक छत वाले हैं देव प्रतिष्ठापन, पूजन-अर्चन सभी पृथ्वी द्वेवी पर किया जाता है। हिमाचल के अन्य जिलों में मन्दिर एक से अधिक छत्तों वाले होते हैं और पूज्य देव-देवियां ऊपर वाली छत पर विराजते हैं।

## चम्बा की मूर्ति कला

डाक्टर जे0 फ0 बोगल, ने चम्बा के ऐतिहासिक अवशेषों की खोज कर उन्हें अपनी पुस्तक "Antiquities of Chamba state" में लेखनीबद्ध कर चम्बा और भारतीय इतिहास की वृहत् सेवा की हैं। चम्बा के पुरा-अवशेषों को देखकर वह मंत्रमुग्ध हो चिल्ला उठे थे--चम्बा एक अचम्भा है। इन का स्रोत उत्कीर्त दस्तावेज है। ये आलेख, चट्टानों पर, शिलाओं पर मूर्तियों पर अभिलेखों ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण किये गए हैं। चम्बा रियासत के दुर्गम पर्वतों के बीच अवस्थित होने के कारण, ये पुरातत्व अवशेष बहुत बड़ी मांत्रा में सुरक्षित रहे, इसलिये चम्बा को यह श्रेय प्राप्त है कि यहां सारे उत्तरी भारत में अधिकतम संख्या में पुरातत्व के अवशेष उपलब्ध है और चम्बा की यह सांस्कृतिक विरासत भली प्रकार सुरक्षित है। इस का संग्रह बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण है।

भरभौर प्राचीन ब्रह्मपुर और छतराड़ी में लक्षणा देवी, गणेश और शक्तिदेवी की कांस्य निर्मित देह दीर्घ मूर्तियां अद्वितीय हैं। उत्तरी भारत में परा-मध्यकालीन इतनी सुन्दर मूर्तियों की कहीं उपमा नहीं है। कुछ मूर्तियों पर दानी राजा मेरु वर्मा और शिल्पकार मुग्गा का नाम और मेरु वर्मा के पिता, दादा और पड़दादा के नाम उत्कीर्ण किए हैं। मूर्तिकला उत्तरीय गुप्तकाल की है जबकि उत्तर भारत में वह काल उपप्लव का था और इन पहाड़ी क्षेत्रों में राजनैतिक सामाजिक विकास के लिये उत्प्रेरक सिद्ध हुआ।

चम्बा की राजधानी दशवी शताब्दी के प्रारम्भ से पहिले भरभौर में थी, बाद में ही चम्बा को स्थानान्तरित हुआ। चम्बा और भरभौर दोनो ही मन्दिरों और अनुपम मूर्तिकला के लिये विख्यात है। इन दोनों स्थानों के अतिरिक्त, चम्बा राज्य की स्थापना के पूर्व और पश्चात राणाओं ने भी मूर्ति शिल्पकारों को संरक्षण दिया था। गूं, छतराड़ी, दो ऐसे स्थान है। गूं में सूर्य (मार्तण्ड) की मूर्ति एक उच्च कोटि की कला है, यह अब संग्रहालय में रखी है। छतराड़ी

के शक्ति देवी के मन्दिर में कार्तिकेय भगवान की मूर्ति हैं यह मूर्तियां उत्तरीय गुप्तकाल की है। सूर्य भगवान की मूर्ति भी विशेषकला की वस्तु है। छतराड़ी मन्दिर में शक्ति और तारा देवी की मूव्रियां सातवीं शताब्दी की कलाकृतियां हैं। कार्तिकेय की पत्थरमूर्ति के ही समकालीन ये मूर्तियां हैं और ऐसे लगता है कि भ्रमणशील मूर्तिकारों द्वारा ये बनाई गई हैं।

राजा मेरुवर्मा के राज्य काल में कई कांस्यमूर्तियां और मन्दिर निर्मित हुए, उनमें बहु'अलंकृत लकड़ी की खुदाई के मन्दिर उस काल के भरभौर और छतराड़ी के शेष हैं। लक्षणा देवी के मन्दिर नक्काशी गंगा के मैदानों जैसी है। ऐसा विदित होता है कि कारीगर कुल्लू से आए होंगे क्योंकि पत्थर का शिल्प और लकड़ी का शिल्प भरभौर के मन्दिरों से पहले के कुलू में पाया गया है।

कुल्लू सम्राट हर्ष के साम्राज्य का भाग था। हर्ष के निधन के पश्चात् साम्राज्य खण्ड विखण्ड हो गया। कुलू के इतिहास से पता चलता है। कि राजा अमर (मेरु) का कुल्लू पर कई पीढ़ियों तक राज्य रहा गद्दी सेना ने कुल्लू पर आक्रमण किया और कुल्लू को जीता, ऐसा उल्लेख मिलता है। भरभौर में पीतल की गणेशमूर्ति की चौकी पर मेरुवर्मा को महाराजाधिराज अंकित किया है। ग्यारहवीं शताब्दी की चम्बा के दो ताम्रपत्रों पर राजा कुल्लु को चम्बा राजाओं का स्वकुल्य लिखा है। कुल्लू उत्तर प्रदेश से कश्मीर, लद्दाख, मध्य एशिया के मार्ग पर होने के कारण समृद्ध था, उत्तर भारत की मूर्तिकला से प्रभावित था। किन्तु रावी घाटी की मूर्तिकला, जो बाद की है, कश्मीर शैली से अधिक प्रभावित है। हरिराय मन्दिर में विष्णु चतुराणन की मूर्ति, शैली में कश्मीर शिल्पकला से मिलती है। चम्बा में गौरी शंकर के मन्दिर में शिव-पार्वती की मूर्ति (दसवीं शताब्दी) का शिव की प्रतिमा का धड़ कश्मीर शैली में है किन्तु आभूषण, वस्त्र, मुखाकृति कश्मीर के शिल्प से भिन्न है।

चम्बा को चुराह तहसील कश्मीर के समीप है। प्राचीन काल में अधिक सम्बन्ध रहे होंगे। यह प्रभाव चुराह के मूर्तियों पर स्पष्टलक्षित है। ग्राम स्वाई और ग्राम देवी-री-कोठी के मन्दिरों का निर्माण वहां के राजाओं ने करवाया था। इन में मूर्ति शिव की शैली छतराड़ी के शक्ति देवी के मन्दिर से भिन्न है।

चम्बा में लक्ष्मी नारायण की संगमरमर की मूर्ति देहदीर्घ कद से भी बड़ी लक्ष्मीनारायण मन्दिर में अति भव्य है। यह कश्मीर शैली से उत्तरभारतीय शैली में परिवर्तन की सूचक है। प्रतिमा के धड़ और मुखाकृति कश्मीर शैली में है। मूर्ति के शिर के पीछे प्रभाचक्र उत्तर भारत के प्रतिहार काल का द्योतक है। मूर्ति आभुषणों ओर वस्त्रों से ढकी रहती हैं इससे यह प्रतीत होतां है कि उस समय जिन शिल्पकारों ने काम किया वे उत्तर भारत के प्रतिहार शैली से जुड़े । बारहवीं तेरहवीं शताब्दी से पहाड़ी मूर्तिकला पर राजस्थानी प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता । साहो में शिवमन्दिर चन्द्रंशेखर मन्दिर के सामने विष्णु चतुराणन मन्दिर की मूर्तियां अद्भुत , इन पर राजस्थानी प्रभाव है।

## चम्बा में भित्ति चित्र

हिमाचल प्रदेश और विशेषतया चम्बा में मन्दिरों और राजभवनों में भित्ति चित्रों की

परम्परा कुछ शताब्दियों से रही है। प्राचीनतम भित्ति चित्र छतराड़ी के देवी मन्दिर में विद्यमान है जो कला का उत्कृष्ट नमूना है। अखण्ड चण्डी एवं रंगमहल के भित्ति चित्र कला के विशिष्ट उत्कृष्ट उदाहरण हैं। रंग महल के भित्ति चित्रों को उतार कर उन्हें दिल्ली केन्द्रीय संग्राहलय में सुरक्षित किया गया है। ये भित्ति चित्र धार्मिक कथाओं शिव-पार्वती, दुर्गा सप्तशति, रामायण, महाभारत, कृष्ण लीला आदि को दर्शाते हैं। नगर के समीप शीतला पुल से आगे ओबड़ी नाम के मुहल्ला में एक शिवालय है। यह मन्दिर पर्वत शैली में है। मन्दिर के गर्भगृह की बाहरी दीवारों पर कलात्मक चित्र अंकित हुए हैं। यह सभी चित्र धार्मिक विषयों शिव पुराण और दुर्गा सप्तशति को दर्शाते हैं।

कलाकारों, चित्रकारों ने मुगल साम्राज्य के पतन के बाद पहाड़ी रियासतों में आश्रय लिया था। चम्बा राज्य भी इनका प्रमुख केन्द्र रहा। उन्हीं चित्रकारों ने अपनी कला की छाप दरवाज़ों, दीवारों आदि पर छोड़ी। इन भित्ति चित्रों का अंकन काल 1695 ई0 माना जाता है। शक्ति मन्दिर (गण्डदेहरा) के भित्ति चित्रों के विषय भागवत एवं विष्णु के दश अवतारों पर आधारित हैं, आकृति अंकन में चम्बा शैली सहज है, रंग योजना भी सीमित है। हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी शैली के प्राचीनतम चित्र हैं।

चम्बा चित्रकला के क्रमिक विकास की शृंखला में चामुण्डा देवी और देवी कोठी के भित्ति चित्र प्रसिद्ध हैं और पहाड़ी शैली में सर्वोत्कृष्ट हैं। इन भित्ति चित्रों का निर्माण 1750 में राजा उमेदसिंह ने कराया था। इन के विषय दुर्गा सप्तशती और कृष्ण लीला के विविध दृश्यों को साकार करना है। अनेक घरों में अति कोटि के बहुमूल्य चित्र उपलब्ध थे, जिन्हें योरुपियन मुहँ मांगी कीमत देकर ले गए।

## चम्बा की विशिष्ट कला-कशीदा

चम्बा का कशीदा कला की दृष्टि से अद्‌भुत है। चित्रकला की भान्ति सुई और धागों से अत्यन्त सुन्दर चित्र कपड़ों पर अंकितं किये जाते हैं। इस कला की विशेषता यह है कि कपड़े के दोनों ओर समान चित्र अंकित हो जाते हैं। इस कशीदा कला को देखने वाले मुग्ध हो जाता है। चम्बा रुमाल के नाम से इनकी मांग देश-विदेशों से आज बहुत अधिक है। कढ़ाई के द्वारा कपड़े पर रामायण, महाभारत की घटनाओं, नायक, नायिकाओं, प्राकृतिक दृश्यों के आकर्षक चित्र बनाये जाते हैं। प्राचीन समय में अमीर घरानों में पहनने वाले वस्त्रों तक यह कशीदाकारी सीमित थी। रेशम को कुसुम्भा से रंगा जाता था। कशीदाकारी के रुमाल मन्दिरों में भी चढ़ाए जाते थे और विवाह में लड़की के दाज में देने की प्रथा थी। इस अद्वितीय कला की मांग विदेशों में बढ़ती जा रही है। अनेक संग्रहालयों में ये रुमाल उन की शोभा बढ़ा रहे है, विशेषकर कृष्ण लीला, रास मण्डल, चम्बा के राजाओं के चित्र इस कला पर पारखियों ने कई पुस्तकें लिखी हैं। श्री रनधावा और श्री मुलखराज आनन्द ने चम्बा की कशीदा कला पर पुस्तकें लिखकर इसकी ख्याति विश्व में फैलाई। कला के प्रसिद्ध कदरदान श्री ए. के. भट्टाचार्य, Director, Indian museum कलकत्ता ने चम्बा के प्रसिद्ध 17 रुमालों पर एक पुस्तक "चम्बा रुमाल" लिखी है जिसके द्वारा चम्बा की इस अद्वितीय कला की ख्याति दूर दूर देश विदेश में हुई है।

## चित्रकला

राजा उमेद सिंह के समय में गुलेर (कांगड़ा) से उच्च कोटि के चित्रकार आए। उन्होंने कांगड़ा शैली की चित्रकला प्रविष्ट कीं यह चित्रकला अति सराहनीय है। कलाकार रंग स्वयं तैयार करते थे। कलम भी बड़ी बारीक होती थी। कांगड़ा शैली और बसोहली शैली की यह चित्रकला राजाश्रय पाकर खूब फली फूली चम्बा के भूरी सिंह संग्रहालय में रामायण और महाभारत की कथाओं में कांगड़ा और बसोहली शैली के चित्र पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। दो अढ़ाई सौ वर्ष पुराने चित्र आज भी अपनी कला के लिए विख्यात हैं।

भित्ति चित्र विश्व विख्यात है। और योरूप के लोग उन्हें बहुमूल्य देकर खरीदते जाते हैं। चम्बा में चित्रकला पर काष्टशिल्प और काष्ट चित्र अति उच्च कोटि के आज तक कई मन्दिरों में सुरक्षित हैं। चम्बा के चामुण्डा मन्दिर की छत, छतराड़ी का काष्ठ मन्दिर और अनेक मन्दिर काष्ठ चित्रों के मुंह बोलती तस्वीर आकर्षण का केन्द्र हैं।

## उद्योग

कुछ घरेलू उद्योग चम्बा की अपनी विशिष्टता रहे हैं। इन में चम्बा चप्पल अपना स्थान रखती हैं पहनने में आरामदायक, मजबूत यह चप्पल पहाड़ी यात्रा के लिये लाभदायक है। गूं और रहनूं कोठी के इलाके में बनने वाले गूं की लकड़ी के बर्तन बहुत पसन्द किये जाते हैं। घरेलू उपयोग के अतिरिक्त ये प्रदर्शिनी की वस्तु भी हैं। चर्म्बा में घर घर कम्बल और ऊनी पट्टियां बुनी जाती हैं। पहाड़ी इलाका होने के कारण गर्म बिस्तरे और गर्म कपड़े की आवश्यकता रहती है। भेड़-बकरी पालन चम्बा के लोगों का धन्धा है, इसलिये ये यह उद्योग ग्राम-ग्राम में विद्यमान हैं।

## मेले

पहाड़ी इलाकों में सर्वत्र और चम्बा ज़िला में विशेषतया सामाजिक जीवन बड़ा विकसित है। उल्लास और रंगीनियों से भरा जीवन जन साधारण मेल मिलाप, राग् रंग, नृत्य-गान द्वारा अभिव्यक्त करता है। इसलिये जहां प्रसिद्ध मन्दिर हैं वहां यात्रा, मेलों के रूप में और यत्र तत्र छिंज के रूप में सैंकड़ों हजारों की संख्या में लोग मनाते हैं। देवी कोठी में भगवती के मन्दिर में वर्षा ऋतु में यात्रा, छतराड़ी की यात्रा, भरभौर के मन्दिरों की यात्रा, महला में यात्रा, साहो चन्द्रशेखर की यात्रा, खज्यार की यात्रा, पांगी, लाहौल के मन्दिरों में यात्राएं इस प्रकार इन यात्राओं में हज़ारों लोग एकत्रित होकर मन्दिर में श्रद्धा सुमन चढ़ा कर देवी स्तुति में संगीत और स्थानीय नृत्य कला से देव को रिझाते हैं तो स्वयं भी नर-नारी हर्षोल्लास से, मेल-मिलाप से झूम उठते हैं। वर्षा ऋतु में स्थान-स्थान पर शक्ति, वीरता के प्रदर्शन के लिये छिंजो का आयोजन किया जाता है। ये मेले पारस्परिक स्नेह, हर्ष का अभिवर्द्धन करते हैं तो व्यापार को बढ़ावा भी देते हैं। कुछ प्रसिद्ध मेलों का यहां वर्णन करना उचित रहेगा।

## मिंजर मेला

चम्बा के मेलों में सबसे प्रसिद्ध मिंजर मेला है जो ऐतिहासिक महत्व रखता है। यह

श्रावण मास में वर्षा ऋतु का मेला है। श्रावण में नदी के किनारे अथवा पींगों की बहार से मेले पश्चिमोत्तर भारत में सर्वत्र मनाए जाते हैं परन्तु श्रावण में वर्षा ऋतु का यह मिंजर का मेला अति महत्वपूर्ण है। इस ऋतु में चारों ओर हरियाली ही हरियाली होती है। प्रकृति अपने पूरे यौवन पर होती है। आकाश मेघाच्छादित रहता है। नदी नाले जल से भरपूर होते हैं। धान और मक्की के खेत झूमते दिखाई देते हैं। मक्की पर मिंजर फूलती है तो कृषक का हृदय उल्लास से भर जाता हैं लोगों का यह उल्लास मिंजर के मेले के रूप में मनाया जाता है। श्रावण के दूसरे रविवार को लोग मक्की की मिंजर के समान बनी तिल्ला में मिंजर बांधते हैं। मिठाई और मिंजर मित्रों सम्बन्धियों को भेजी जाती है। रियासती काल में राजा की ओर प्रतिष्ठित नागरिकों को मिंजर भेजी जाती थी, आजकल नगर-पालिका की ओर से भेजी जाती है। श्रावण का तीसरा रविवार मिंजर मेले का दिन है। उस दिन प्रातः राजवंश के इष्टदेव रघुवीर, लक्ष्मी नारायण और अन्य देवी देवताओं की पूजा कर मिंजर भेंट की जाती है। सप्ताह भर खेलों के कार्यक्रम चौगान में चलते रहते हैं। राजकीय विभागों-कृषि, बागवानी, उद्योग, स्वास्थ्य आदि विभागों की प्रदर्शिनी चार पांच दिन सजाई जाती है, चौगान के चारों ओर मिठाई, अन्य सामान की दूकाने सजती है। झूले भी लोगों को आकर्षित करते हैं। जिला भर से और अन्य स्थानों से बच्चे, जवान, बूढ़े नर, नारियाँ हज़ारों की संख्या में चौगान में एकत्रित होते हैं। अखण्ड चण्डी महल से रघुवीर ओर अन्य देवी देवताओं की पालकियां राजकीय झण्डे के साथ, पुलिस, सैनिक बैण्ड, अन्य बाजो-गाजों के साथ पांच बजे शोभा यात्रा प्रारम्भ होती है, अन्य नागरिक भी शोभा यात्रा में सम्मिलित होते हैं। चौगान से होते हुए यह शोभा यात्रा नलहोरा में रावी के किनारे बने मैगज़ीन के पास पहुंचती है। वहां राजकीय ठाठबाठ से फल नारियल के साथ रावी में मिंजर प्रवाह कर दी जाती है। तत्पश्चात् अन्य नागरिक भी अपनी मिंजर प्रवाहित करते हैं। पहले पशु बलि के लिये भैंसा प्रवाह करने की परम्परा थी। यह कई वर्षों से बन्द कर दी गई है। यही शोभा यात्रा उसी प्रकार बैण्ड बाजा सहित वापस अखण्डचण्डी पहुंच जाती है। सप्ताह भर सायं को संगीत का कार्यक्रम रहता है ओर रात को नाटक, संगीत, नृत्य के भान्ति भान्ति के रंगारंग मनोरंजन चलते हैं जो लोगों को सम्मोहित किये रहते हैं। इस अवसर पर समयानुकूल विशेष गीत चलते हैं जिन में कूंजड़ी, मलहार, अन्य मौसमी गीत वाद्य सहित शोभा बढ़ाते हैं।

प्रसिद्ध कूंजड़ी गीत इस प्रकार हैः–

## संगीत

1. उड़ उड़ कूंजडिये, मिंजरां दे मेले हो,
मेरे रांमा मिंजरां दे मेले हो, रे मना....
2. उचे पिपले पींगा पैय्यां, रल्ल के सैय्यां झूटन गैय्यां
झूटे लादी सैय्यां हो .. झूटे लांदी सैय्यां हो, रे मना...
3. तोता मैना उड़ी ओ जान्दे, देश बेगाने हो मेरे रामा
देश बेगान हो, रे मना

इकना दी लगी हो रहन्दी, इकना दी टुट्टियां हो
रे मना इकना दी टुट्टियां हो।
उड़ उड़ कूंजड़िये मिंजरा दे मेले हो..

मिंजर वह मेला है जिसे देखने मनाने और जिसमें शामिल होने के लिये चम्बा जनपद के नर-नारियां, किशोर-किशोरियां बड़ी उत्सुकता, व्यग्रता और उत्कण्ठा से प्रतीक्षा करते हैं और मधुर, भाव-पूर्ण सुरीली तान से अपने अपने प्रदेश के बीत गाते हुए मेला में पहुंचते हैं। कुछ गीतों की पंक्तियां इस प्रकार हैं:-

1. चम्बे रे चुगाना मिंजरां लगोरी हो, मिंजरां लगोरी हो, ते
   रौणका लगोरी हो। (चम्बामाली)
2. चल मिंजरा जो जाणा मेरी प्यारिये, चल मिंजरा जो जाणा हो।
   लिहसी जंधा जोत किहयां लाणा मेरे प्यारूआ,
   लिहसी जंधा किहयां जाणा हो। (भटियात)
3. चम्बे मिंजरो सुणान्दे हो, तान्नी गद्दिया।
   असां मिंजरा जो जाणा हो तान्नी गद्दिया।
   ह्त्था बंगड़ियां पाणी हो मोटो गद्दणी। म
   त्थे बिन्दुलू जो लाणा हो मोटो गद्दणी। (भरभौर)
4. चप्पली ते मौजे,पाणे, ते मस्तु चम्बे मिंजरा जो जाणा हो।
   दोहड़ाते जोजी लाणी, ते मस्तु, चम्बे मिंजरा जो जाणा हो।
   कुनी भरना, कुणी जीणा वो मस्तु, चम्बे मिंजरा जो जाणा हो। (चुराह)

### मेला रथ रथनी

यह मेला-चम्बा नगर में एक पौराणिक आख्यान को मेला का रूप देने पर राजा की ओर से प्रबन्ध किये जाने पर मनाया जाता था। अभी कुछ ही वर्षो से इसे बन्द किया गया है। यह भस्मासुर राक्षस के शिवजी से वरदान प्राप्त करने से आरम्भ होता है। जब अहंकार ग्रस्त भस्मासुर स्वयं शिव-पार्वती के लिये अभिशाप बनने लगता है। अन्त में विष्णु पार्वती का मोहिनी रूप धारण कर राक्षस को उसी वरदान अर्थात अपना ही हाथ सिर पर रख कर उसे भस्म करते है। श्राद्ध पूर्णमासी के दिन इस कथा को साकार रूप नाटक का दिया जाता था। विष्णु को मोहिनी के रूप में वस्त्रों, फूलों आदि से मूर्ति बनाई जाती थी। चन्द्रगुप्त मन्दिर से हरिराय मन्दिर को इसे ले जाते थे। इसे रथनी नाम दिया जाता था। इसके साथ दो आदमी मुंहकाला किये और एक चेला धूप दानी संगल.लिये जाते थे। डाकखाने के पास उन आदमियों को मक्की के टोटू आदि मारकर कपड़ा को लूट लिया जाता था। और कपड़ा बांट लेते थे। रथ को मन्दिर ले जाते थे।

चम्बा रियासत का राजपरिवार और प्रजा अत्यन्त धार्मिक वृत्ति के रहे हैं उनका जीवन धार्मिक क्रिया कलाप में व्यतीत होता था। जीवन सादगी से परिपूर्ण, और स्नेहिल था। लोग धर्मभीरु, सत्यप्रिय थे। चोरी चकारी का कहीं नाम नहीं था। घरों में ताला लगाना नहीं जानते थे। वचन के पक्के और ईमानदार । सारे देश की भान्ति हिन्दू त्यौहार बड़ी लग्न से मनाये जाते हैं किन्तु चम्बा में कुछ त्यौहारों की विशिष्टता रही है। इनमें लोहड़ी का त्यौहार चम्बा में अपने ही प्रकार का मनाया जाता हैं।

लोहड़ी का त्यौहार मकर संक्रान्ति से एक दिन पहले सारे उत्तरी भारत में, हर प्रदेश में अपने ढंग से मनाया जाता है, किन्तु लोहड़ी की चम्बा में अपनी ही विशेषता है। यह प्रथा सोलहवीं शताब्दी में प्रारम्भ हुई। चम्बा नगर के चौदह कोनों में चौदह स्थान आग जलाने के लिये निश्चित हैं, उन्हें मढ़ी की संज्ञा दी गई है। प्रथम पौष से प्रत्येक मढ़ी मुहल्ला के लोग सायं को अपने मुहल्ला से लकड़ी मांगकर लाते हैं। साथ में यह गाना गाते हुए प्रत्येक घर के आगे लकड़ी मांगते हैं:- सुन्दर मुन्दरिये हो, तेरा कौन विचारा हो, दुल्ला भठी वाला हो, दुल्ले धी व्याही हो, सेरशकर पाई हो, दाने दी चुंग सुट्टी, कन्ने लकड़ी दी डाली सुट्टी हो। यह लकड़ी पहले पहर रात्री को मढ़ी में जलाई जाती है। मुहल्ले के लड़के खेलकूद, गीत, मनोरंजन करते हैं। लोहड़ी से दो रात्री पूर्व पहले दिन आधा जगराता होता है। दूसरी रात्री प्रत्येक मढ़ी में पूरा जगराता किया जाता है। गीत गाते हैं और आग के इर्द गिर्द बैठकर नगारे बजाते हैं। लोहड़ी के दिन अमृत वेला में आरम्भ कर नगर के प्रत्येक घर में लड़के लोहड़ी के पैसे इस गीत को गाते हुए मांगते हैं। "हांकरो हांकरो घबरुओ काठोरा, रोक रुपैया राखोरा- देओ जी टक्का धेली" इस प्रकार पैसे इकट्ठा कर रात को प्रत्येक मढ़ी में आग जलाई जाती है। सुराड़ा मुहल्ला की राजमढ़ी कहलाती है। वहां से मशहरा (मशाल) उठता है। उसे अगली मढ़ी में ले आते हैं। वहां से भी मशहरा उठता है, इस प्रकार सात मढ़ियों सें मशहरे उठते हैं। अगली और सात मढ़ियां सात मुहल्लों में हैं। उन में पिछली सात मढ़ियों के मशहरे डुबाने की प्रथा है। राज मशहरा को नहीं छुआ जाता किन्तु शेष मशहरों को लूट कर आग में जला देने का प्रयास होता है। छीना झपटी, हाथा पाई होती है। इस प्रकार मनोरंजन के साथ वीरता का प्रदर्शन भी होता है। रात को घरों में पूजा की जाती है। अग्नि में गुड़, तिल, रयोड़ी, भूनी मक्की को आहुतियां दी जाती हैं। मित्रों, पड़ोसियों और सम्बन्धियों को इन चीजों को और पकवान आदि बांटा जाता है।

## वैशाखी

वैशाखी की संक्रान्ति को विशेषतया विवाहित पुत्रियों, बहनों आदि को न्योता देकर मायके बुलाते हैं और उन्हें अच्छे अच्छे पकवान के साथ पिन्नड़ी खिलाने का रिवाज है, खासकर ग्राम क्षेत्र में। कोदरा के आटा में छांछ में भिगोकर दो तीन दिन इसे खमीर बनने देते हैं। वैशाखी के दिन शहद से या गुड़ के साथ खाते हैं।

भैय्या दूज और मकर संक्रान्ति भी बहिनों, पुत्रियों के आदर सत्कार के त्यौहार हैं। अच्छे अच्छे वस्त्र-गहने धारण कर, आंनन्द विभोर हो महिलायें अपने मायके जाती हैं,

भाई-भतीजों, माता पिता से मिलकर सह-भोजन कर बड़ी प्रसन्नता अनुभव करती हैं।

## चम्बा में शैव प्रभाव

शिव अथवा रुद्र की उपासना का प्रचलन भारत में वैदिक काल और उस से भी पहिले से हो रहा है। यजुर्वेद में शतरुद्रीय अध्याय की पर्याप्त ख्याति है। तैतिरीय आख्यक में समस्त जगत् रुद्ररूप कहा गया है। श्वेत्ता श्वेत्तर उपनिषद में भगवान शिव को सर्वान नशिरो ग्रीव, सर्वभूत कुहाश्य, सर्वव्यापी और सर्वगत माना गया है। महाभारत में शैव भक्तों का वर्णन उपलब्ध है। वामन पुराण में विभिन्न चार शैव सम्प्रदायों का उल्लेख किया गया है-शेष, पाशुपत, कालदमन तथा कापालिका। ब्रह्मसूत्र के भाष्यकार आचार्य शंकर ने अपने ब्रह्मसूत्र शंकर भाष्य में माहेश्वरों का वर्णन किया है। इस प्रकार शिव की उपासना भारत में अव्यत्ता प्राचीन प्राचीन काल से प्रचलित है। सिन्धु घाटी के अवशेषों से प्रकट होता है कि उस काल में भी शिव उपासना प्रचलित थी।

अद्वैत, ब्रह्म, शून्य, हिरण्यगर्भ की साकार कल्पना आद्य पिण्ड शिव पिण्डी के रूप में ही की गई है। परमात्मा और प्रकृति ही शिव ओर शक्ति हैं। शक्ति (इ) के विना शिव शव है अर्थात् ब्रह्म सुप्तावस्था में है। शिव (ब्रह्म) की सृष्टि रचना की इच्छा ही शक्ति है। जब शिव (ब्रह्म) में स्फुरण होता है, स्पन्दन होता हैं तो चेतना जागृत होती है, यही चेतना शक्ति विभिन्न अवस्थाओं से होती हुई व्यक्त सृष्टि की रचना करने में समर्थ है।

शिव में भारतीय प्रज्ञा ने "पूर्णत्व" एवं "ब्रह्मतत्व" की प्रतिष्ठा की है। परमतत्व ब्रह्म वस्तुतः निर्गुण, निर्विकार है और शिवलिंग चिन्ह के रूप में अमूर्त एवं अरूप परमात्मा को रूपायित किया जाता है। शिवलिंग सृष्टि की व्यापकता का प्रतीक है। वेदों, पुराणों, शास्त्रों में सृष्टि को 'मुर्गी के अण्डे' जैसा माना गया है, शिवलिंग का आकार भी वही है। स्कन्द पुराण का उल्लेख अत्यन्त महत्वपूर्ण है:-

आकाश लिंगमित्याहु पृथ्वी तस्य पीटिका।
आलय सर्वदेवानांलयनालिंग मुच्यते।।

अर्थात् आकाश लिंग है, पृथ्वी उसकी पीठिका है। सब देवताओं का वही आलय है, जिस में सब लय हो जाते हैं, इसलिये इसे लिंग कहते हैं।

लिंगोपासना अत्यन्त प्राचीन ओर विश्वव्यापी रही है। प्रश्चात्य जगत में भी लिंग पूजा का व्यापक प्रचार रहा है। लिंग पूजा के संदर्भ में विश्व का विशालतम शिवलिंग तुर्की के बोविलिन नामक स्थान पर है जिस की ऊंचाई 1200 फीट है। मक्का में काबा का संगे असवद "शिवलिंग" ही बतलाया जाता है।

द्वादश ज्योतिर्लिंग और अष्टमूर्ति शिवलिंग की अवधारणा शिव को सर्वव्यापी, सर्वेश एवं महादेव प्रतिष्ठित कर दिया है। अर्द्धनारीश्वर की अवधारणा का मूल भी तत्वतः शिवलिंग ही है। शिव परम तत्व के रूप में और पार्वती परमशक्ति के रूप में सृष्टि का मूलाधार है।

शिव पुराण में जालन्धर में सती के स्तन भाग का शिव द्वारा ताण्डव नृत्य करते

गिरना ओर पीठ का त्रिगर्त देश (कांगड़ा) में गिरना वर्णित है। शैवमत का विस्तार तमिल में अधिक है तो भी उत्तर पश्चिमी भारत-कश्मीर से नेपाल तक के सारे पर्वतीय क्षेत्र में अधिक है। शैवमत से सम्बन्ध रखने वाले लोक प्रबन्ध गीतों में सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन अति मार्मिक ढंग से किया गया है। इन भक्ति प्रधान लोक गीतों को स्थानीय भाषा में "एंचली" कहते हैं। निम्न पंक्तियों में इनका रसास्वादन कीजियेः-

1. न थीए धरणी न थीए गासा, ताँ थीया नहेर गुबा ऽऽऽरा न।
न थीए चन्द्र न थीए सूरज, ताँ थीआ नहेर गुबा ऽऽऽरा न।
न थीए तारा न थीए भ्याणू, तां थीआ नेहर गुबाऽऽऽरा न।
न थीए पौण न थीए पाणी, तां थीआ नेहर गुबाऽऽऽरा न।

अब धरती, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य, तारे, भ्याणू तारा, पवन और जल नहीं थे और घना अन्धेरा छाया हुआ था, अर्थात् शून्य था, ब्रह्म निश्चेष्ट अवस्था में था। ऐसी स्थिति में शिव (पुरुष), प्रकृति (शक्ति, माया), ब्रह्म में ही समा जाते हैं।

2. दैहणे अंगेरी सामी मैल कढ़ाईऐ, जिसा केरी धरणी बणाऽऽई न।
बौंए अंगेरी सामी मैल कढ़ाईऐ, जिसा केरी मन सो बणाऽऽईन।
बरमा पुच्छदा विष्णुए ताँहऐ, कुन्नी लेणे धरणी रे भाऽऽरेन।
विष्णु बोलदा बरमे ताँहऐ, जिनी लैणे धरणी रे भाऽऽरेन।
नाज गुरु भच्छणा मन सो व्याहणीं, तिनी लेणे धरणी रे भाऽऽरे न।

ब्रह्मा ने अपने दाहिने अंग से मैल निकालकर उस की सृष्टि बनाई और बाएं अंग की मैल निकालकर उससे मन बनाया (मनसा रूपी कन्या)। फिर ब्रह्मा विष्णु से पूछते हैं कि अब सृष्टि का भरण-पोषण कौन करेगा? विष्णु ने ब्रह्मा को उत्तर दिया कि जो इस धरती (सृष्टि) का भरण-पोषण करेगा अर्थात् शिव इस धरती का नियामक होगा और जो (ब्रह्मा) इस धरती पर अन्न भक्षण करेगा वही मनसा रूपी कन्या का वरण करेगा और सृष्टि को भरण करेगा।

3. पहले धरती कि पहले गसा? पहले धरती पिचे होए गासा।
पहले चन्द्र कि पहले सूरज? पहले चन्द्र पिचे होए सूरज।
पहले तारा कि पहले भ्याणु? पहले तारा पिचे होए भ्याणु।
पहले पौण कि पहले पाणी? पहले पौण पिचे होए पाणी।
पहले गुरु कि पहले चेला? पहले गुरु पिचे होए चेला।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने आपस में परामर्श किया कि सृष्टि के तत्त्वों को किस क्रम से प्रकट किया जावे। फैसला किया कि पहले धरती (व्यक्त प्रकृति) और फिर आकाश बनाया जाए। इसी क्रम से चन्द्रमा, सूय्र, तारे, पवन, पानी, गुरु और चेला उत्पन्न किए जावें।

4. संझ संझ होई काला बेला ए हां, डंगरां ढपाणे रा वेला ए हां।

संझ संझ होई काला वेला ए हां, बच्छू जो पियाणे रा बेला ए हां।
संझ संझ होइ काला वेला एहां, गौआँ दुहाणे रा बेलाए हां।
संझ संझ होई काला वेलाए हां, धूप धुरवाणे रे वेलाए हां।

अब कार्यकाल का निर्णय हुआ, तो लोक गीत के अनुसार सांझ के समय गौओं को घर लाकर बांधने, नच्छा पिलाने, दूध दूहने और फिर सन्ध्या के समय सन्ध्या वन्दन करने और धूप जलाने के समय है।

5. परागबड़ी ता पर आया हो, धन साहेब मेरा।
धौलू बैला ता पर आया हो, धन साहेब मेरा।
वज्र सिला ता पर आया हो, धन साहेब मेरा।
सेस नाग ता पर आया हो, धन साहेब मेरा।
सेस नाग लिपटा ये हो, धन साहेब मेरा।

सृष्टि की उत्पत्ति के पश्चात् भगवान विष्णु पीपल के पेड़ पर बैठकर सृष्टि को देखने आए। उन्होंने देखा कि धवल बैल (नन्दी) के सींगों पर पृथ्वी रखी है, धवल बैल वज्र शिला पर है, वज्र शिला वज्र बटुए पर और वज्र बटुआ शेष नाग के सिर पर स्थित है और शेष नाग शिवजी के गले में लिपटे हैं।

6. परागबड़ी पणमेसर बैहदे, चौंह चक्के रुली जांदा पाऽऽणी न।
परागबड़ी पणमेसर बैहदे, मुनख उपाऽऽणा लाऽग्या न।
सुन्ने रूपेरा वन्दा मुनख उपाया, भर बन्दे आ हियुंगता ऽऽर न। हियुंगताऽऽरन

ब्रह्मा पीपल के वृक्ष पर बैठे थे। चारों ओर सागर-पानी उमड़ रहा था। ब्रह्मा ने सोने चान्दी और धातुओं का मानव बनाया, परन्तु वह न तो बोलता था, न हिलता डुलता था।

7. वामी मिट्टी रा बन्दा मुनख उपाया, जिनी बन्दे भरी हियूंगता ऽऽर न।
नौ गजिंया बन्दा मुनख उपाया, बन्ह बन्देआ वो धर वा ऽऽर न।
त्रै सौ सठ बरहिआं उमर थोड़ी, किहां बन्हणे धर बारऽऽर न।
रैर्हआं-कलैई हत्था सोठियां लेण, बसन हियुआं लियां धारऽऽर न।
नौ राजिया बो बन्दा छपन कराया, ग्रिठमुठ्लु रा पैहरा आऽऽया न।
धौलु धाय रि केरि बणण धनौईया, गुम्बरे रे बणी जान्दे काऽऽम्न न।
सिहाण्डली बारे-पारे खेलण लड़ाइयां, मुण्डियां देलगी जान्दे ठाऽऽऽले न।
ग्रिठ मुठ्लु वन्दे छपन करायेनै, साढ़े त्रैहत्था बन्दा उपाऽऽऽया न।

तत्पश्चात् ब्रह्मा ने बाम्बी मिट्टी का आदमी बनाया जो नौ गज़ लम्बा था और उसकी आयु 360 व़र्ष थी, इसलिये थोड़ी आयु के कारण उसने गृहस्थी नहीं बसाई। उसने रै और

देवदार की सोठी लेकर पर्वतों में घूमते हुए जीवन यापन करना ठीक समझा ब्रह्मा जी ने निराश होकर नौगजिया मानव को छिपा दिया और फिर उसके स्थान पर एक गरिठ और एक मुठ का आदमी बनाया । इस गरिठ-मुठ आदमी का समय आया फिर तो सुन्दर रचना शुरू हो गई। उसने सफेद घास के धनुष और कांटों के तीर बनाये। भूमि पर हल्की रेखा के आमने-सामने युद्ध लड़े, जिस के कारण लहू की नदियां बहने लगी और लाशों के भूमि पर ढेर लगने लगे ब्रह्मा फिर निराश हुए और ग्रिठ मुठ के आदमी को छुपा दिया और उसके स्थान पर साढ़े तीन हाथ का बन्दा पैदा किया।

8. के-के खाला के बो कमाला, के मेरे लेखे तू लाऽऽला न।
थोड़ा-थोड़ा खाला मता कमाला, थोड़ा मैं तेरे लेखे लाऽऽला न।
साढ़ें त्रै हत्था बन्दा मुनख उपाया, जिन्नी तेरा दितेआ नुआऽऽला न।
झिके वो देसे रा कोई सिद्ध जोगी आया, औंदे जोगी गजरां गाऽऽयान।
गज भरी-भरी चौंका दुआया, आटे कूटे वो लिखा ऽऽया न।
चौले माहे तेरा मण्डल भराया, बड़े बब्बरुये वो भराऽऽया न।
धरणी पर तेरा मण्डल लिखाया, सुरगे टंगी फुल माऽऽला न।
पसुए धाए मुण्डी मण्डल चढ़ाई, लै सामी अपना उधाऽऽर न।

9. घटा पिच्चे सोभदा सिदू जोग्गीं, घटा पिचे सोभदा दीआ-धूप।
घटा पिचे सोभदा तोबर पत्तर, घटा पिचे सोभदे चार बन्दे।

ब्रह्मा ने साढ़े तीन हाथ के बाकी मिट्टी के मनुष्य से उसके जीवन सम्बन्धी प्रश्न पूछा हे मानव! तू अब क्या खायेगा, क्या कमायेगा और अपने जीवनदाता के प्रति क्या अर्पण करेगा? मनुष्य ने उत्तर दिया- हे नाथ! मैं बहुत मताऊंगा, थोड़ा खाऊंगा और कुछ आप के अर्पण करुंगा और वह नवाला के रूप में होगा। नवाला के लिये नीचे के देस से एक सिद्ध योगी आया जिसने आते ही एक गज वर्ग का चौकाक दिलवाया और उसे आटा से लिखवाया फिर चावल, दाल माश, बड़े बब्बरु से उसे भरा दिया। उसके ऊपार ऊंचाई पर फूल माला लटका दी और भूमि पर मण्डप बना दिया। अन्त में पशुबलि दी और उसके मुण्ड को मण्डल में चढ़ाया और प्रार्थना की- "हे स्वामी। अपना उधार वसूल करो"।

घट के पीछे सिद्ध योगी, दीवा-धूप, ताम्र-पत्र और चार बन्दे (गायक) शोभा दे रहे हैं।

10. तां धामां पेई हो ऽऽ कैलासाऽऽ अप्पु सामी कर देऽऽहार शृंगार।
चोली लाई होऽऽ फिरकोलीऽऽ चिट्टा लाँदा चोला ऽऽकाला डोरा।।
टोपी लाई ऐ होऽऽ कुक्ड़याली ऽऽभौंर रथेरी हो उस वारीऽऽ।।

मण्डप बन जाने पर मानव ने नवाला पर शंकर को कैलाश में न्योता भेजा शिवजी

ने हार शृंगार किया, चिट्टा चोला पहना, काला डोरा बांधा, मुरगे की तरह की ऊंची टोपी पहनी और भंवर के समान तेज़ चाल वाली सवारी पर आए।

11. अप्पु सामी आए हो ऽऽ मेरे जगा जो ऽऽ।
अप्पु सामी आए हो ऽऽ लम्मे गोहरे ऽऽ।।
फेरी घुमाई साईयां ऽऽ तेरे जोड़े ऽऽ।।
अप्पु सामी आए हो ऽऽ मेरे सरणा ऽऽ।
फेरी घुमाई साईयां ऽऽ तेरे कंगणा ऽऽ।।

भगवान शिवजी स्वयं मेरे यज्ञ में पधारे हैं। वह लम्बे मार्ग से होकर आए हैं। हे भगवन! तेरे जूतों को नमस्कार हो। भगवान मेरे कोठे पर स्वयं आए हैं। हे प्रभु! तेरे कंगणों को नमस्कार हो।

12. झिके वो देसे री चंगी मालन आई ऐ।
जिस गूंदी ऐ फुल्ल मा ऽऽला न।
सुन्ने केरिए सूईये रूपड़े लाए धागे।
मच्छी कण्डे माला गुंदा ऽऽऽई न।।
कौडीए कील्ए चुरा सीए लड़िए।
मच्छी कण्डे माला गुंदाई ऽऽऽई न।।
धरती पर वो तेरा मण्डप लिखाया।
सुरगे टंगी वो फुल्ल मा ऽऽऽला न।
पसुए धाए मुण्डी मण्डला चढ़ाई।
लै सामी अपणा उघाऽऽ रा न।।

नवाले की माला बनाने के लिये नीचे के इलाका से एक अच्छी सुलझी मालन आई। उस ने फूलों की माला गूंथने के लिये सोने की सूई और चान्दी के धागों का प्रयोग किया। यह माला मच्छी कण्डे की सिलाई चौरासी लड़ियों की गूंथी गई। धरती पर नवाला के लिए मण्डप बनाया और उसके ऊपर माला को लटकाया। पशु की बलि देकर उसके मुण्ड को मण्डल पर चढ़ाया गया और फिर प्रार्थना की, 'हे स्वामी! अपने उधार के वसूल कर लो अर्थात् तुम्हारा जो मुझ पर ऋण था, इस नवाला पूजन से मैं उसे दे रहा हूं।

## शिव-पूजन (नवाला)

पर्वतीय क्षेत्र चम्बा में नव-गृह प्रवेश, विवाह, मुण्डन संस्कार, शुभ संस्कारों के अवसर पर अथवा भक्ति-भावना से एक विधि विशेष द्वारा शिवजी की पूजा-अर्चना का सामूहिक आयोजन किया जाता है, उसका नाम नवाला रखा है। चूं कि इस आयोजन में फूलों की सुन्दर वनमालाओं द्वारा शिव पूजन का विशेष महत्व है, अथवा नौ व्यक्तियों की सामूहिक उपस्थिति

अपरिहार्य है, इसीलिये यह नौ वाला अर्थात् नवाला नाम प्रचलित हुआ। जीवन की प्रत्येक उपलब्धि को शिव का वरदान मानकर उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिये नवाला का अनुष्ठान होता है। सिद्धनाथ सम्प्रदाय का प्रभाव इस अनुष्ठान पर विशेष रूप से है।

इसमें नौ व्यक्तियों की उपस्थिति अनिवार्य है, वे हैं आयोजक एक, जोगी एक, वन्दे (शिव स्तुति के गायक) 8, चेला एक, कारदार (दो)। नवाले के आयोजन वाले दिन जोगी फूलमाला, धूप-पात्र, कंसी, चांदी, कटहल-पौहल तथा सांगल आदि लेकर आयोजक के घर सन्ध्या के समय अपने परम्परागत वेश में पहुंचता है। उसके गले में मेखल, कान में मुद्रा, गले में नान्दी ओर सिर पर भगवा पगड़ी, धोती आदि होते हैं। मकान के खुले कमरे में मण्डप बनाया जाता है। जोगी, चेला और गायकों (बन्दे) को उपयुक्त स्थान पर बैठाकर पगड़ी और दान दक्षिणा दी जाती है। मण्डप के केन्द्र भाग में आटे के ढेर से कैलाश और चार कोनो को चार वेदों के नाम से नियोजित किया जाता है। कैलाश के आगे शिव-पार्वती की मूर्तियां रखी जाती है। मण्डप बन जाने के पश्चात् फूल माला के कैलाश के ऊपर छत के साथ लटकाया जाता है। फूलों की चौरासी लड़ियों से मछली के आकार की लगभग छः सात फुट लम्बी और लगभग फुटव्यास के गोलाकार वृत्त की माला नवाले के लिये बनाई जाती है। बाजीदार बाद्य आरम्भ कर देते हैं तो महिलाएं मंगलगान करती हैं। मण्डप के पूरा होने पर प्रथम पहर को आरती उतारी जाती है। मेढे या नारियल की बलि दी जाती है। चार गायक दो ढोलियों में घट थापना आरम्भ कर देते हैं और सृष्टि की उत्पत्ति को ऐंचली गाते हैं। ये एंचली पहले ही वर्णन की गई है। आमंत्रित लोग भगवान शिव के प्रतीक फूल माला और कैलाश में धूप एवं दक्षिणा द्वारा प्रणाम करते हैं। चेले को ऊनी आसन पर माला के सामने बिठाया जाता है। उसका वेश चोला, डोरा, टोपी होती है। गुगल धूप की गन्ध, वाद्य, नगारे की थाप, महिलाओं के संगीत, शिवजी के नाना प्रकार के जयघोष से वातावरण गर्म होने लगता है और चेले में शिव-शक्ति का संचार होने लगता है। जोगी जल्दी जल्दी और ज़ोर से शिवजी और उसके स्थानों के जयकार बुलवाता है तो चेला अपने आसन पर खड़ा होकर नाचता है, सांगल खेलता है, और शिवजी की प्रसन्नता की सूचना देता है। विघ्न बाधाओं की पूर्व सूचना देता है। चेले के नाचने का दृश्य समाप्त होने पर भोग लगाया जाता है। घटथापना और चेला नाचने, भोजन के पश्चात् बन्दे (गायक) नये सिरे से ऐंचली, शिव-विवाह गाते हैं जो प्रातः तक लगातार चलता है और रात्री जागरण होता है।

चेला ऐसा व्यक्ति होता है जिस पर देवी अथवा देवता रीझ कर अपनी देवशक्ति का संचार करे। चेले अपने कुल के सबसे बड़े व्यक्ति को पुश्तदर पुश्त चेला बनाते रहते हैं। इस में गुरु-शिष्य परम्परा का बड़ा महत्व है।

एंचली-प्रायः उस लोक प्रबन्ध गीत, लोक गाथा को कहा जाता है जिसे "पांवडे" भी कहते हैं। यह शब्द धार्मिक लोकगाथाओं के लिये ही प्रयुक्त होता है। इन गाथाओं में सृष्टि की उत्पत्ति, शिव-विवाह, रामायण, महाभारत तथा भ्यागई आदि के लम्बे आख्यान आते हैं जिन में राजा मोरं ध्वज, गोपी चन्द हरीशचन्द्र, नल-दमयन्ती आदि की धार्मिक जीवनियां वर्णित

हैं। ऐंचली के प्रत्येक छन्द को कली कहते हैं।

ऐंचली द्वारा एक लोक गाथा

गौरां पेटा मंह पीड़ पुकारी हो ऽऽ नचे धूड़आ करेआं मेरी कारी होऽऽ।
होर नचदे ते तूं किनी नचदाऽऽ किंहां नचणा नि बाजे बजे मेरे हो ऽऽ।
गौरां बांह भन्नी बीण बजाई होऽऽ गौरां केश जोड़ी तारां चढ़ाई होऽऽ
गौरां दन्द भन्नी कौड़ी चढ़ाई हो ऽऽ गौरां भम्मे तरोड़ी पत्र चढ़ाए हो ऽऽ।
नचे धूड्आ बाजे बजे तेरे हो ऽऽ धूडू नचदा जटां वो खलारी हो ऽऽ।
गंगा जटां किच्छा बाहरा जो आहिऽऽ गौरां पुछदी तूं सौकण मेरी होऽऽ।
गंगा-गौरां सरोसर लड़ी हो ऽऽ चुट्टे हार चुरासियां लड़ी हो ऽऽ।।

सवाला

नवाला सम्पन्न होने के तीसरे दिन शिव-विसर्जन का कार्यक्रम होता है। सायं को जोगी पुनः नवग्रह की पूजा सामग्री के साथ पूजा का विधान करता है। बन्दे (गायक) स्थान ग्रहण कर विदाई की ऐंचली गाते हैं। अन्त में फूलमाला समेट कर जोगी और बन्दे अपने घर जाते है। विदाई के साथ शिवजी से आशीर्वाद प्राप्ति की जो कली गाते हैं, वह इस प्रकार हैः-

शिव मेरे बरधी चले ऽ वरधी चलेऽ सिव वरधे
कैलासा सिव मेरे वरधी चले ऽ।
खड़ा उठ घरे दे महोई या - शिव मेरे वरू धी चलेऽ।
चिड्डुए चुर-भुरलाया - सिव मेरे वर धी चले ऽ।
फिरी बो कधाड़ी जो ईणा - सिव मेरे वरधी चल ऽ।
बरहे रोजे फिरी आई जाला - सिव मेरे वरधी चले ऽ।
मंगलिओ पुत्रे रि जोड़ी - सिव मेरे वर धी चले ऽ।

शिवरात्री पुराणों के अनुसार शिवरात्री के सम्बन्ध में अनेक लोक आस्थाएं जुड़ी हैं। शिव का पाताल लोक से कैलाश को जाना तथा शिव विवाह के उपलक्ष में इसे मनाया जाना ये दो लोक आस्थाएं पौराणिक आधार लिये हैं। इस दिन रात-जागरण शिव-पार्वती की मूर्तियां बनाकर उनको सरसों के फूलों से ढककर पूजा करने के पश्चात् पणिहार पर छोड़ आने की प्रथा है।

शिव-विवाह- भगवान शिव की गौरजा के साथ विवाह की सारी प्रक्रिया को एँचली रूप में नवाला पर गाया जाता है। जब विवाह के लिये गजपत के घर जाना था तो शिवजी ने विवाह की तैयारी के लिए ब्रह्मा को बुलाया, फिर क्या क्या हुआ इसे बड़े मार्मिक ढंग से लोक कवि ने पेश किया हैः-

हुक्त ता करो मेरे बरमा भाऊ जो होऽऽ। अघु मेरे सामी हाज़िर सदेआऽऽ।।
तुसां भला जाणा हट्टी-बजारा जो होऽऽ। ब्याहु भला केरे कपड़े अणणे ऽऽ।।
धौले भला मैले बलद खेददा हो हो ऽऽ। हट्टियां बो बजारां जो आया होऽऽ।।
खोल कराड़ा हटड़ी अपणी जो हो ऽऽ। ब्याहु भला केरी खरीद करणी हो ऽऽ।।
सार-उधारी मैं नहीं करदा हो हो ऽऽ। रोक रूपैय्या नगद वो लैयो हो ऽऽ।।

### विवाह पर स्नान-नहाणा

औलू-मुसरबे पाणी भरेआ होऽऽ। सुनरे तताहड़े पाणी तपेया हो।।
चनणे री चौकी अंगणुए डाही होऽऽ। अप्पु मेरे सामी जो न्हाणा पेआ हो ऽऽ।।
सत् सुहागणी बुटणा मलदिआं होऽऽ। अप्पु मेरे सामी जो न्हाणा पेआं हो ऽऽ।।
केसरी भाभो बुटणा मलदी है हो ऽऽ। अंग भलीं भली न्हाया राजेआ ऽऽ।।

### यज्ञोपवीत संस्कार पर गीत

विवाह से पूर्व यज्ञोपवीत संस्कार का अनुष्ठान अर्थात् गुरु मंत्र की दीक्षा होती है। उस समय के लिये लोक गीता-कार द्वारा गीतः-

गुरु अपणे केरी सेवा करला हो ऽऽ। तां तिजो जने ऊ मिलणा होऽऽ ।।
माता पिता केरी सेवा करला हो ऽऽ। तां तिजो जनेउए मिलणा हो ऽऽ।।
सभ-सभ तीर्थ न्हाला राजेआ हो ऽऽ। तां तिजो जनेउए मिलणा हो ऽऽ।।
भुखे-भंगाली जो भोजन देला हो ऽऽ । तां तिजो जनेउए मिलणा हो ऽऽ।।
नंगे निर्वाणी जो कपड़े देला हो ऽऽ। तां तिजो जनेउए मिलणा हो ऽऽ।।

शिव के योगी वेश देखने पर माता उससे पूछती है कि उसे किशोरावस्था में यह कठिन योग किस गुरु ने दिया –

माताः कुनां तिजो जोग दित्तेआ ऽ हल्के आ जोगणुआ ऽ।
कुनी तेरा मुंण्ड मुन्नोआ ऽ कुनी तेरे कनडू छेदाए।
शिवः गुरु मेरे जोग दित्तेआ ऽ कातिए कनडू छेदाए ।
माताः मरी वो जाओ गुरु तेरा ऽ हल्के जो जोग दित्ते आ।
शिवः गुरु मेरे गाली न देआं ऽ गुरु मेरा बुरा बुझदे।
माताः मरी वो जाओ गुरु तेरा ऽ हल्के दे कनडू छेदाए।
शिवः गुरु मेरे गाली न देआँऽ गुरु मेरा बुरा बुझ दे।

### संगीत

कला चाहे किसी भी देश की हो, किसी भी क्षेत्र की हो, उसमें अपार आकर्षण शक्ति होती है। यह सर्वदिशीय है। हिमाचल प्रदेश और इसी प्रकारन्तर में चम्बा के लोक गीतों में

लय है, ताल है, आकर्षण है और है हृदय का सौंदर्य। चम्बा के लोकगीतों में विविधता है, जन भावनाओं का साक्षात्कार है। इन में गीत, संगीत और नृत्य की, लोक मानस की अभिव्यक्ति है। चम्बा के सारे जन जन का इतिहास ईश्वर-रत, शान्त और शैव मत के अखण्ड प्रभाव में रहा, इसलिये शिवभक्ति की महिमा रही और पारिवारिक जीवन शिवमय बना रहा। गीतों में शिव भक्ति का प्रभाव आज तक बना है। लोक-प्रथा, लोक गाथा शिवमय है।

प्राकृतिक सौंदर्य चम्बा में पर्वत-शृंखलाओं की हिममय चोटियाँ, नदी नालें में थिरकती जल धारा में अपनी भव्यता, रंगीनियां बिखेरता है तो जन जीवन सजीव, रंगीन हो उठ्ठता है, उसके भाव-कण्ठ में कोमल स्वर लहरियों और पांव की थिरकन द्वारा सजगता आती है। वनो, खेतों, वृक्षों पर स्वच्छन्द पक्षी समूह जनमानस की सुप्त भावनाओं, उसके प्रेम प्रसंग, विरह की पीड़ा, करुण-क्रन्दन को झकझोर डालते हैं। ऐसे उन्मुक्त वातावरण में चम्बा के जन-जीवन में आडम्बर रहित, सरल, निष्कपट, अलंकार विहीन लोक-गीत, स्वर-लहरी और मनमोहक सामूहिक नृत्य पनपा है। संस्कृति की अभिव्यक्ति हुई है वस्तुचित्रण में, जिसमें रस है, स्वर है ताल है, हृदय-स्पर्शी भावुकता है। प्रेम-प्रसंग है तो त्यागमय जीवन का आदर्श भी है। विवाह, जन्म आदि संस्कारों के समय गाए जाने वाले संस्कार गीत हैं तो सामान्य गीत भी हैं, हास्य प्रसंग भी हैं और वीर रस गीत और मन्दिरों, धार्मिक प्रसंगों में गाए जाने वाले गीत भी। मेले, सामूहिक नृत्य और गीत चम्बा जनजीवन का अभिन्न अंग है, केवल मनोरंजन का साधन मात्र नहीं है। ये गीत अत्यन्त मधुर, कर्णप्रिय, रसमय, लावण्यमय और मादक होते हैं। रामायण, महाभारत, शिव-पुराण की गाथाओं को लोकगीतों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। शिव-स्तोत्र को जो नवाल के अवसर पर गाया जाता है; सूई के मेले पर गाए जाने वाले गीत घुरेई; चैत्र मास की संक्रान्ति पर ढोलरु; मल्लहार, कूंजड़ी, विरह गीत, शृंगार रस के गीतों के कुछ उद्धरण यहां प्रस्तुत हैं। कुछ गीतों के हिन्दी अर्थ भी दिये हैं। कुछ गीत हृदय और मस्तिष्क से नहीं तो परिस्थितियों से उपजते हैं जैसे श्रम गीत-फसल की कटाई, निराई आदि के समय गाए जाने वाले, पारिवारिक जैसे सास-बहु, नन्द-भावज के, विवाह के समय गालियों के रूप में गीत, अथवा विवाह आदि के अन्य गीत।

नृत्य-चम्बा की नृत्य कला बड़ी ख्याति प्राप्त है। हर (तहसील) बज़ारत की अपनी नृत्य शैली है- गद्दी, चुराही, चम्बयाली, साहोकी, भटियात और पांगी की अलग अलग शैली हैं। विवाह अवसर पर बारात के चले जाने के बाद नाच महिलाओं का होता जिसे 'पड़ुआ' कहते हैं।

भगत- रासलीला के समान यह एक लोकप्रिय लोकनाट्य है। इसमें पुरुष ही स्त्री पात्रों का अभिनय करते हैं। मंच आंगन या कोठा छत प्रयोग में लाया जाता है। इसका आरम्भ कृष्ण लीला प्रसंग से किया जाता है, फिर ऐतिहासिक या सामाजिक कथानक रहता है। हास्य-व्यंग्य भी रहता है। वाद्य भी प्रयुक्त किये जाते हैं। लोकरंजन के अतिरिक्त सामाजिक, व्यवहारिक कुरीतियों पर व्यंग्य रहता है।

लोक गीत

कूंजड़ी - वर्षाऋतु का गीत-मिंजर मेले के अन्त में गाया जाने वाला

उड़ उड़ कूंजड़िये, वर्षा देध्याड़े हो, मेरे रामा जिन्दयां दे मेले हो।
वे मना याणी मेरी जान, उड़ उड़ कूंजड़िये।
पर तेरे सुन्ने वो मढ़ावां, रूपे दियां चुंजा हे
वे मना याणी मेरी जान, उड़ उड़ कूंजड़िये।
चिकनी बूंदा मेघबरसे, पर मेरे सिजे हो।
ओ मेरे रामा याणी मेरी जान, उड़ उड़ कूंजड़िये।
उचे पिपल पींगा पेईयां, रल मिल सखियां झूटन गइयां हो।
झूटे लान्दियां सैइयां हो।
ओ मेरे समा वे मना याणी मेरी जानु उड़ उड़ कूंजड़िये ।
जिन्दे रहले फिरी मिलले, मुआ मिलदा न कोई हो।
वे मना याणी मेरी जान, उड़ उड़ कूंजड़िये।

ऐ कूंजड़ी (एक छोटा पक्षी) तू उड़ कर जा और मेरे प्रीतम को सन्देश दे कि बरसात का मौसम आ गया है, मिलन के लिये घर आ जाओ। तू उन्हें समय लेकर आना। मैं तेरे पंख सोने से मढ़ा दूंगी और चोंच पर भी चान्दी चढ़वा दूंगी, तू उड़ कर जा। कूंजड़ी कहती है-वर्षा की हल्की हल्की बूंदा बांदी हो रही है, मेरे पंख भीग गए हैं, इसलिए मैं उड़ने में असमर्थ हूं, नहीं तो जरूर सन्देश लेकर जाती।

प्रेमिका फिर कहती है- मेरी छोटी आयु है, मैं तुझे कहती हूं, तू उड़ कर जा। ऊंचे पीपल के वृक्ष पर पींग पड़ी हुई है। सब सखियां मिल जुल कर झूला दे रही हैं। ऐसे समय में उस नवयौवना को अपने पिया की बड़ी याद आती है और उदासी छा जाती है किन्तु फिर आश्वस्त भी हो जाती है कि यदि ज़िन्दगी रही तो फिर मिलन होगा ही । उसे फिर घबराहट होती है कि ऐसा भी हो जाता है, कोई मिल नहीं पाता।

अलबेलुआ
नाले नाले जान्दा नलगोजुआ बजान्दा,
सुतियां दी नींदर खांदा भला हो, अलबेलुआ हो।
छलियां दी रोटी हुन्दी बड़ी मोटी, दही कणे चूरी कने खाणी भला हो,
अलबेलुआ हो।

नाले नाले जान्दा नलगयेजधा बजान्दों, लोकां जो गलान्दा थानेदार भला हो, अलबेलुआ हों चम्बे दी हट्टी मेरे देरे दी खट्टी, लोकां जो गलान्दा हट्टी मेरी भला हो, अलबेलुआ हो। खाणे जोनी दीन्दा, पहरणे जोनी दिन्दा, लोकां जो गलान्दा, लाड़ी मेरी भला हो, अलबेलुआ हो,

इस लोकगीत में नव-विवाहित पत्नी का अपने पति के प्रति रोष भरा उलहना है। वह अपने पति को शिकायत करती है कि अलबेला, मस्त दीवाना नाले के किनोर किनारे मस्ती में नलगोजू (बांसुरी) को बजाता रहता है। प्रातः सोए लोगों की नींद गंवा देता है। ऐसे अलबेले मस्त को खाने को कुछ मिलता नहीं, मोटी मोटी मक्की की रोटियां छाछ के साथ और कोदरा की मोटी रोटियां दही के साथ खाकर मस्त रहता है, नाले के किनारे नलगोजा बजाने में मस्त रहता है, लोगों को कहता फिरता है कि मैं थानेदार हूं। चम्बा में मेरे देवर की दुकान हैं और यह लोगों को कहता फिरता है कि दुकान मेरी है। झूठा कहीं का, नखाने के लिये मुझे देता है, न पहनने के लिए कपड़े देता है। लोगों को कहता है कि यह मेरी पत्नी है। बड़ा वना फिरता है।

मिंजर के अवसर पर, सूई मेले के अवसर पर चम्बा में रानी सूई के बलिदान के सम्वन्ध में गाया जाने वाला सुकरात गीत बड़ा प्रसिद्ध है। सूई का मेला 15 चैत्र से मासान्त तक लगता है। इस अवसर पर यह गीत विशेष तौर पर भावभीने स्वर के साथ लड़कियां, नारियां ओर गायक गाते हैं। यूं (प्राचीन नाम शिवपुरी) के वैशाख मास में यात्रा के अवसर पर अन्त में सुकरात गीत के गाने की परम्परा है। गीत इस प्रकार हैः-

गुड़क चमक भाइया मेघा हो, रानी चम्बभाली रे देसा हो।
किंहां गुड़कां किहांचम्मकां हो, अम्बर भरोरा घने तारे हो।
कुतुए दी आई काली बदली हो, कुतुए दा आया मेघा हो।
छाती दी आई काली बदली हो, नैना दा बरसया मेघा हो।
सुकरात कुड़ियो चिड़ियो, सुकरात राजे रे बेहड़े हो।
सुकरात कुड़ियो चिड़ियो, सुकरात नौणे पनिहारे हो।।

## कूंजू और चंचलो

चंचलो - कपड़े धोआं छम-छम रोआं चंचले। मुखबोल जवानी हो,
हाय वो मेरिये जिन्दे मुख बोल ज़बानी हो।
मेरे कने हथ मत लान्दा कूंजुआ, बिच गजरा निशानी हो।
कूंजू- तेरे पिछे होया बदनाम चंचले। किजो बणदी बगानी हो
हाय वो मेरिये जिन्दे कि जा बणदी बगानी हो।
चंचले। - राती वो बराती मत इन्दा कुंजुआ, बैरिये भरियां बन्दूका हो।
कूंजू- मेरी तेरी प्रीत पुरानी चंचले, तूं तां कदर न पाणी हो,
हाय वो मेरिये जिन्दे, तूं तां कदर न पाणी हो।
चंचले - मेरी बांही लाल चूड़ा कुंजुआ, अगे गजरा निशानी हो,
हाय वो मेरिये जिन्दे अगे गजरा निशानी हो

कूंजू - लोक तां गलान्दे काली काली चंचलो, तूं तां मरूए दी डाली हो
हाय वो मेरिये जिन्दे तूं तां मरूए दी डाली हो।
चंचलो- तूं तां चल्या परदेस कूंजुआ, मिंजो देई जा निशानी हो।
हाय वो मेरिये जिन्दे मिंजो देई जा निशानी हो।
कूंजो - पंज वो रुपयै तिज्जो नाम चंचलो, अंगूठी दिन्दा निशानी हो,
हाय वो मेरिये जिन्दे, अंगूठी दिन्दा निशानी हो।
चंचलो- मेरा वो चेतापी भुलायां कुंजुआ, मिंजो करी लेणा चेते हो,
हाय वो मेरिये जिन्दे, मिंजो करी लेणा चेते हो।
कुंजुआ - ऐ ता रहणी निंतां दी याद चंचलो, भावे मरियो जांगा हो।
हाय वो मेरिये जिन्दे, भावे मरियो जांगा हो।
चंचलो - नित दी होइयां सलाभां कुंजुआ शिवजी करला रखवाली हो,
हाय वो मेरिये जिन्दे, शिवजी करला रखवाली हो।।

विरह लोक गीत प्रेमिका के वियोग की विरह गाथा इन लोक गीतों में बड़े मार्मिक ढंग से इन पंक्तियों में वर्णित है।

बाड़ुए सुगाड़ुए तू कजो झांकदी, झखां कजो भारदी,
दो हथ बुटणे दे लायां फुलमू, गल्लां होई बीतियां।
बुटणा लवाण तेरी ताई चाचियां रांझू सकी भाभियां।
जिन्हा दे मना विच चाओ रांझू गल्लां होई बीतियां।
कुनी, ब्राह्मणे तेरा ब्याह लिखिया रांझू ब्याह लिखिया।
कुनी कीती कुड़माई रांझू गल्लां होई बीतियां।
कुत्तो पुरोहते मेरा बियाह लिखिया, फुल्लमू बियाह लिखिया,
बापू कीती कुड़माई, गल्लां होई बीतियां।
बाहरे नाहरे रांझू दी जानी चली, भाईयो डोला चलया,
बाहरे बाहरे फुलमू दो लाश चली, गल्लां होई बीतिया।
रखा ता कहारा मेरीं पालकिया, रखा पालकिया।
फुलमू जो दाग लगाणा जानी गल्लां होई बीतियां।
बौएं हथे रांझू चिता जे चिणी, रांझू चिता जे चिणी,
देहणे हथे लाया लाम्बू भाईयो, गल्लां होई बीतियां।
दोस्ती नी लाणी फुलमू कच्चेयां कन्ने, जानी कुंवारियां कन्ने,

ब्याही करी हुन्दे बेई मान सेईयो, गल्लां होई नीतियां।

रांझू और फुलमू में गहरी दोस्ती है किन्तु रांझू के माता-पिता को उनका याराना मान्य नहीं। उन्होंने रांझू की दूसरी लड़की से सगाई कर दी और जल्दी ही ब्याह रचा दिया। अब फुलमू लुक छिपकर रांझू से मिलने आती है तो रांझू उसे समझाता है कि अब तो उसका ब्याह हो रहा है, इसलिये वह उसे बुटना लगाने आए, अब तो पुरानी बात बीत गई। फुलमू कहती है कि बुटना लगाना तो अब तेरी ताई, चाची, भाभियों का काम है, जिन्होंने तेरा ब्याह रचाया है और जिन्हें चाव है। वह पूछती है, किस ब्राह्मण ने तेरा ब्याह लिखा और किसने कड़माई की। रांझू उत्तर देता है कि ब्याह तो कुल पुरोहित ने लिखा और कड़माई बाप ने की है। प्यार सम्बन्ध टूटने का फुलमू को इतना सदमा हुआ कि उस के प्रण पखेरू उड़ गए। एक तरफ तो रांझू की बारात जा रही थी और दूसरी ओर फुलमू को जलाने के लिये ले जा रहे थे। रांझू ने देखा तो उससे नहीं रहा गया। अपनी पालकी रोकने के लिये कहारों को कहा। पालकी से उतर कर उसने चिता बनाने में बाएं हाथ से सहायता की और दाहिने हाथ से चिता को आग लगाई चिता से आह निकलती है कि कंवारों के साथ दोस्ती नहीं लगानी चाहिए। वह ब्याह कर लेते हैं फिर उनका दिल बेईमान हो जाता है।

### एक अन्य घुरेई

वैशाखी की त्यौहार को चम्बा जनपद और विशेषतः 'गद्देरन' भरभौर में बड़े चाव से मनाया जाता है। यह स्त्रियों के लिये मायके से मिलने का त्यौहार है। ससुराल की जो यातनाओं से ऊबी एक युवती अपनी माँ से मिलने की तड़पन अपने इस गीत द्वारा जो घुरेई के रूप में गाया जाता है, कैसे प्रकट करती है, इसे अनुभव करते ही बनता है:-

**यह संवाद अति मार्मिक है।**

बेटी-बसन्दु ता फुल्ले माय धामी-धूमे, रित आइया सुंधड़ौणी हो,
अम्मां तां मेरिये कुण तुहार आया हो?
मां - धीए तू मेरिये बसोआ तुहार आया हो।
बेटी- अम्मा तू मेरिये मेरी बापू जो सादा भेजे हो।
मां - बापू तां तेरा धीये चम्बे चाकरी हो, ऐ अप्पू आणा अप्पू जाणा हो।
बेटी- अम्मा तू मेरिये मेरे भाइये जो सादा भेजे।
मां - भाइया तां तेरा धिये निक्का याणा, अप्पू आणा वो अप्पू जाणा हो।
बेटी - भेजणा तां भेजी दीएं न तां चिड़ी बरहेड़ी बणी इल्ली हो।
नूहं - सबना दी नुआँ सासो पैइय जान्दीए, मिन्जो भी पैइए दा चाव हो।
सास - सबना दे सादे नुएं आई पुज्जे तेरा न सादा कोई हो।
नूहं - दराणियां जठाणी सासो डाइयां मारे मुन्जो बो पैइये भेजे हो।
बहन- चले ता चले भइया बहियां बौंधे सुरहाड़ी रा दुख सुख लांदे हो

पिंदड़ी ता पिंदड़ी भइया अप्पू खाए, ऐरे दे पट्ठे मुन्जो दित्ते हो।
आपुता खाए भाइया घिउए - चूरे, द्राहेदी छेड़ी मुन्जो दिति हो।
भाइया ता मेरिया चितरी घड़ोली भेजी गई हो।
भाई -बहणे ता मेरिये तुजो नई धड़ोली देला हो।
नूंह - मितलु घुआड़े सासो मैई हो धड़ोली अंदी हो
सास - नूंए ता मेरिये मुं सैइये धड़ोली लैणी हो।
बहन - भाइया ता मेरिया, सस सैई घड़ोली मंगदी हो।
भाई - बहने तू मेरिये अऊं सई धडोली देला हो।
बहन - इतणी तां गल्लां भाइया तेरे कने, मेरी अम्मा रा मत हो गलांदा हो।
पुत्र - कुरले ता कुरले अम्मा नदी-घिरे ऐ, नदी गिरेदंड़ मगर मच्छ हो।
अम्मा तू मेरिये मेरी बहणा दी कखड़ी सुरहाड़ी हो।
धीयां न दीणी लोको नदी पारेए
अपणा न मिलदा बैरी कोई हो।

**मसाहदे**

लोक-भाषा में सारंगी वाद्य के साथ कृष्ण लीला के जो गीत गाए जाते हैं, उन्हें मसाहदे कहते हैं।

संस्कार गीत विवाह, आदि पर समयानुकूल अनेक गीत प्रचलित हैं

धार्मिक गीत- शिव-भक्ति के, वैष्णव परम्परा, लोक देवी-देवताओं सम्बन्धी लोकगीत पर्वों पर मन्दिरों में गाए जाते हैं। ये भावुक हृदय के स्वाभाविक उद्‌गार हैं। मेले यात्रों पर धार्मिक गीत ही गाये जाते थे।

**लोक गीत**

ढोलरू- ये गीत चैत्र मास की संक्रान्ति से घर घर जाकर गायकों का एक वर्ग जिन्हें डूमने कहते हैं, एक सप्ताह तक गाते हैं और नव वर्ष का शुभागमन इस प्रकार मनाते हैं। इन में कई गीत करूण रस के भी हैं। चूंकि ये गीत ढोलकी के साथ गाए जाते हैं, अतः इन्हें ढोलरू कहते हैं। निम्न गीत तो चम्बा की रानी के बलिदान का है जो चम्बा की रानी ने पानी लाने के लिये अपनी बलि देकर सम्पूर्ण किया। यह गीत सूई मेला के अवसर पर भी गाया जाता है।

सुनियां सेजां राणियां, कि सुपना जे होया ना,
कुल्हा सपने आई, राणियां कि कुल्हा सपने आई ना,
बडियां बलियां मंगदी भाइयो बडियां बलियां मंगदी ना,

हुक्म तो दया पिता जी मैं कुल्हा पूजना जाणा ना,
सद्दा ता कहारा भाइयो कस्सा मेरा डोला ना,
कुल्हा पूजणा जाणा राणियां ने कुल्हा पूजना जाणा ना।
पहला ता सौगण राणियां को विच पराली हो या ना,
पालकी दे कुंगरु भाइयों ऊपरी अड़ी जान्दे ना,
दूजा तां सौगण राणियां कि वाहर परोली होया नस, मधरी बोली बोल्न कागा तेरी चुंजा सुन्नेआं मढ़ाली ना।
धन ता नहांदी राणी कुल्हा उप्पर जांदी ना,
रखा ता कहारो भाईयो रखा मेरा डाला ना,
खणा ता भाइयो चुराहियो खणा मेरी समाधि ना।
सद्दा बद्दा भाईयो मेरे कुले पुरोहिता ना।
बणी ता बणाई राणी बैठी विच समाधि ना।
चैत्र महीने भाईयो करे मेरा मेला ना।
रानी को सेज पर सपना आया उसे पानी की कूलह सपने आई
यह तो बड़ा बलिदान मांगती है
पिताजी मुझे कूलह पूजन की आज्ञा दो।
कहारों को बुलाओ, वह मेरी डोली तैयार करें। रानी कूल्ह पूजने जाएगी।

पहला शगुन रानी का द्वार पर हुआ कि पालकी के कुंगरू ऊपर उड़ने लगे। दूसरा शगुन द्वार से बाहिर हुआ जब कौआ काएं कांए करने लगा। रानी कहती है हे कौए मीठी बोली बोल मैं तेरी चोंच सोने से मढ़ाऊंगी।

धन बांरती रानी कूल्ह घर गई और कहारों से कहा, वह डोली रखदें। साथ के चुराही के कहा कि वे समाधि खनन करें। कुल पुरोहित को बुला ओ। रानी हार श्रृंगार कर समाधि ा में बैठ गई। उसने प्रार्थना की कि चैत्र मास में उसका मेला लगाया जावे।